ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल (1885-1963) तहसील साम्बा, ज़िला जम्मू के एक जागीरदार परिवार में पैदा हुए। उन्होंने औपचारिक शिक्षा केवल आठवीं कक्षा तक ही प्राप्त की लेकिन स्वाध्याय तथा लोकसम्पर्क से उनका व्यक्तित्व निरन्तर निखरता चला गया। स्वभाव से मिलनसार, निर्भीक एवं स्पष्टवक्ता होने के कारण वे जनप्रिय थे। उन्होंने अपना कार्यजीवन एक मिडिल स्कूल में अध्यापन से शुरू किया। बाद में वे पटवारी नियुक्त हुए और विभिन्न स्थानों पर कार्य करते-करते तहसीलदार के पद तक जा पहुँचे।

श्री सम्याल का जीवन डोगरी समाज, साहित्य और संस्कृति के लिए समर्पित था। वे इन क्षेत्रों में कार्य करनेवाली संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। उन्हें डोगरी, पंजाबी, हिन्दी, संस्कृत, उर्दू और फ़ारसी के प्रसिद्ध कवियों के असंख्य पद, श्लोक, छंद और शे'र कंठस्थ थे। साहित्य-सृजन, विशेषकर काव्य-रचना के क्षेत्र में, उन्होंने अपनी प्रौढ़ावस्था में क़दम रखा। *अरुणिमा* में उनकी प्रतिनिधि कविताएँ संकलित हैं। उन्होंने डोगरी, हिन्दी, पंजाबी, उर्दू और फ़ारसी में कविताएँ लिखने के अतिरिक्त गिलगित्ती (शिना) भाषा में एक उपयोगी व्याकरण की भी रचना की। सम्याल कृत *श्रीमद्भगवतगीता* का डोगरी अनुवाद अत्यन्त लोकप्रिय है। उनकी मृत्यु अठहत्तर वर्ष की आयु में कैंसर से हुई।

डोगरी की सुपरिचित लेखिका चम्पा शर्मा ने इस विनिबन्ध में कवि सम्याल के जीवन-संघर्ष तथा उनके रचनात्मक योगदान का समुचित आकलन किया है।

SAHITYA AKADEMI
REVISED PRICE Rs. 15-00

ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल

चम्पा शर्मा

भारतीय साहित्य के निर्माता

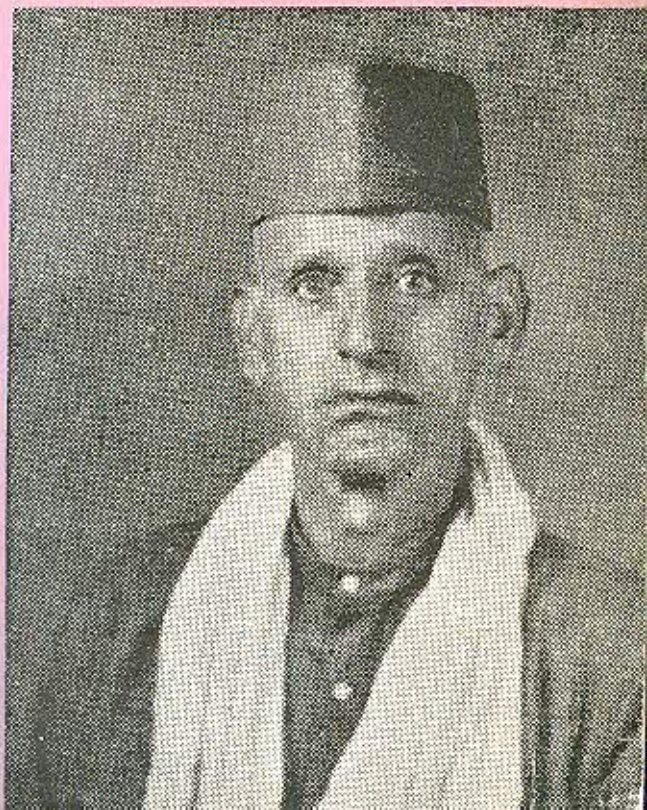

रघुनाथ सिंह सम्याल

अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य है, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ—रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं । उनके नीचे बैठा है मुंशी जो व्याख्या का दस्तावेज़ लिख रहा है । भारत में लेखन-कला का यह संभवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख है ।

नागार्जुनकोण्डा, दूसरी सदी ई.
सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

भारतीय साहित्य के निर्माता

रघुनाथ सिंह सम्याल

चम्पा शर्मा

The rates of the Sahitya Akademi publications have been increased w.e.f. 1 May 1992 vide Govt. of India letter No. JS(K)/91-545 dated 11 February 1992.

साहित्य अकादेमी

Raghunath Singh Samyal : A monograph in Hindi by Champa Sharma on the Modern Dogri poet. Sahitya Akademi, New Delhi (1991),

SAHITYA AKADEMI
REVISED PRICE Rs. 15-00

© साहित्य अकादेमी
प्रथम संस्करण : 1991

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवीन्द्र भवन, 35, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली 110 001
विक्रय विभाग : 'स्वाति', मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय
जीवन तारा बिल्डिंग, चौथी मंज़िल, 23 ए/44 एक्स,
डायमंड हार्बर रोड, कलकत्ता 700 053
29, एलडाम्स रोड, तेनामपेट, मद्रास 600 018
172, मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग,
दादर, बम्बई 400 014

SAHITYA AKADEMI
REVISED PRICE Rs. 15-00

मुद्रक : वैलविश पब्लिशर्स,
पी. पी. 5, मौर्य एन्कलेव,
पीतमपुरा, दिल्ली 110 034

अनुक्रम

परिचय	7
समाज-सुधारक	21
काव्य-कला एवं सर्जना	34
गीता-अनुवादक के रूप में	43
शिना व्याकरण के रचयिता	53
उपसंहार	55
चयन	59
संदर्भ ग्रंथ-सूची	91

परिचय

ज़िला जम्मू की तहसील साम्बा के दक्षिण में स्थित एक बस्ती, जिसे कैहली मण्डी के नाम से जाना जाता है, रघुनाथ सिंह का जन्म स्थान है । प्राप्त जानकारी के अनुसार इस मण्डी को ठा. रघुनाथ सिंह के पुरखे भारतदेव ने बसाया था । भारतदेव के पिता मल्लदेव, जिन्हें 'मल्लखां' भी कहा जाता था, के पुरखे लखनपुर के मुग़ल शासकों के दरबार में काम करते थे । सम्भवतः मुगल प्रभाव के कारण ही मल्लदेव का नाम 'मल्लखां' रख दिया गया होगा । कहा जाता है कि उसके किसी क्रूर कर्म के कारण उसे किसी ब्राह्मण का शाप लगा था जिससे उसका वहाँ रहना कठिन हो गया था । जब वह खाना खाने लगता तो उसके भोजन एवं खाद्य पदार्थों में कीड़े ही कीड़े पैदा हो जाते थे । फलस्वरूप 'मल्लखां' लखनपुर से साम्बा आ पहुँचा । उसके चार बेटे—भारतदेव-जुबलदेव, ममोट खां, और दौलतदेव-हुए और चारों ने साम्बा नगर में एक-एक बस्ती बसाई जिसे 'मण्डी' कहा गया । कैहली मण्डी के संस्थापक भारतदेव की चौथी पीढ़ी में भागदेव हुए जो महाराजा रणजीतदेव (1735-1781 ई.) के समकालीन थे । भागदेव की भी चौथी पीढ़ी में रघुनाथ सिंह के दादा ठा. बूटा सिंह हुए । धीरे-धीरे मण्डियों की संख्या बाईस हो गई जिसमें इसी परिवार से सम्बन्धित राजपूत बसने लगे । इसकी पुष्टि के लिये ठोस ऐतिहासिक प्रमाणों की आवश्यकता है । बाईस संख्या की परिकल्पना जम्मू राज्य के साथ भी जुड़ी हुई मिलती है—एक कहावत है 'बाईस राज पहाड़ दे, बिच जम्मू राज-सरदार' अर्थात् डुग्गर कहलाने वाले पहाड़ी प्रदेश में छोटे-बड़े मिलाकर कुल बाईस राज्य थे जिसमें जम्मू राज्य उन सबका सरदार अर्थात् प्रमुख था ।

साम्बा नगर की कंढी के उल्लेखनीय नगरों—अखनूर, जम्मू, बसोहली,नूरपुर कांगड़ा एवं बिलासपुर—में अपनी महत्ता है ।

डोगरा लोगों की भूमि (डुग्गर) की भोगोलिक संरचना बड़ी विचित्र

है । इसके उत्तर की ओर बर्फ़ से ढके पीरपांचाल के ऊँचे-ऊँचे पर्वत हैं जो मानो भारतदेश की उत्तरी सीमा पर प्रहरी का उत्तरदायित्व निभा रहे हों । इसके नीचे के भू-भाग को अन्तर्गिरी एवं उसके भी नीचे के प्रदेश को बहिर्गिरी नाम से जाना जाता है । प्रत्येक भू-भाग अपनी-अपनी प्राकृतिक छटा एवं संपदा लिये हुए है । अन्तर्गिरी की पर्वतीय शृंखलाओं को 'धारा' कहा जाता है । यह अत्यन्त रमणीय भूभाग है, जहाँ पग-पग पर झर-झराते झरने, छल-छलाते नदी-नाले एवं मन्त्रमुग्ध कर देनेवाली मख़मली घास नवागन्तुकों को सहसा आकर्षित कर लेती है । पर इसके साथ ही तनिक नीचे बहिर्गिरी में कंढी की खुश्क पहाड़ियों वाला गर्म एवं निर्जल इलाका पड़ता है जहाँ का जनजीवन बड़ा दुश्वार रहा है । तदुपरान्त डुग्गर का वह इलाका पड़ता है जिसकी सीमा-रेखा पंजाब के मैदानी भाग से जा मिलती है ।

डुग्गर प्रदेश की कंढी नामक पट्टी का प्राचीन नाम बहिर्गिरी है। वैज्ञानिकों ने बताया है कि 'इस पट्टी की सीमा हिमालय से परे हिन्दुकुश एवं सुलेमान पर्वतों के साथ-साथ बलूचिस्तान के बीचों-बीच होती हुई अरब सागर तक चली गई है । इसका पूर्वी छोर नेपाल को छूता हुआ मिलता है । इसके कुछ हिस्से को भूगर्भशास्त्रियों ने शिवालिक भी कहा है । जम्मू प्रान्त में कंढी की पट्टी की लम्बाई लगभग ढाई सौ किलोमीटर पड़ती है । इसमें जल का नितान्त अभाव होने के कारण कृषि-कर्म केवल वर्षा के जल पर ही निर्भर है । इस भू-भाग में आज से पचास साठ वर्ष पूर्व जीवन-यापन बड़ा कठिन एवं विपदामय था । लोगों को दिनचर्या के लिये कोसों दूर चलकर कुओं से पानी लाना पड़ता था । कंढी प्रदेश में वर्षा ऋतु में यात्रा करना बड़ा कठिन एवं श्रमसाध्य कार्य होता था । स्थान-स्थान पर बरसाती नदी-नाले पथिकों के लिये संकट पैदा कर देते थे । इस प्रकार की जलवायु से यहाँ के लोगों के आचार-विचार पूर्णतया प्रभावित हैं । लोग परिश्रमी, स्वाभिमानी और कर्मशील हैं । किसी के आगे झुकने से मर जाना श्रेयस्कर समझते हैं। देखने में कंढी का भू-भाग भले ही उग्र एवं अनाकर्षक हो परन्तु यहाँ के युवक और युवतियाँ सुन्दर-गठीले देहधारी परिश्रमी

एवं कर्मठ हैं । कंढी के ही लोग मूल डोगरे माने गये हैं । ये स्वाभिमानी, इज्ज़तदार, वचनबद्ध, अनुशासनप्रिय एवं पुरातनपंथी हैं । इतिहास लेखक केदारनाथ शास्त्री के अनुसार कंढी के वीर सपूतों ने न केवल महाभारत युद्ध में ही अपितु चन्द्रगुप्त एवं राजा पोरस के श्रेष्ठतम सैनिकों की भी सहायता करके यूनानी योद्धाओं के छक्के छुड़ा दिये थे । इसके अतिरिक्त हर्षवर्धन की सामरिक विजय प्राप्ति में मुग़ल-काल में अफ़गानिस्तान एवं सीमावर्ती भागों में यहाँ के शूरवीरों ने बहादुरी के जौहर दिखाये थे ।

इसी धरती ने राष्ट्रहित के लिये हथेली पर सर रखकर घूमनेवाले मियां डीडो, महाराजा गुलाब सिंह जैसे शूरवीरों को जन्म दिया । इसी कठोर धरती के वीर सपूतों ने दोनों विश्वयुद्धों में बढ़-चढ़ कर जौहर दिखाये थे और संसार में डुग्गर प्रान्त का नाम ऊँचा किया था ।

योद्धाओं के साथ-साथ यहाँ के विद्धानों-विद्याव्यसनियों-कवियों, लेखकों एवं कलाकारों-चित्रकारों-मूर्तिकारो,भवन-निर्माताओं ने अपने-अपने क्षेत्रों में वरीयता प्राप्त की । ठा. रघुनाथ सिंह सम्याल भी इसी कंढी क्षेत्र के सपूत थे ।

साम्बा[1] नगर के दक्षिण में स्थित कैहली नाम की मण्डी के प्रतिष्ठित जागीरदार सम्याल परिवार में 21 माघ, 1942 विक्रमी तदनुसार 1885 ई. को ठा. रघुनाथ सिंह का जन्म हुआ । इनके पिता का नाम ठा. चतुर सिंह था जो शुपेइयां (कुलगाम तहसील, कश्मीर) के छोटे-से जागीरदार थे और दादा का नाम ठा. बूटा सिंह था । रघुनाथ सिंह जी चार भाई थे और चारों भाइयों—स्व. ठा. सन्त सिंह, स्व. बलदेव सिंह (रिटायर्ड आई.जी.पी.) एवं ठा. नसीब सिंह में रघुनाथ सिंह बड़े थे ।

ठाकुर रघुनाथ की माता श्रीमती निरजंन देवी अपने पिता के

1. साम्बा जम्मू नगर से 40 किलोमीटर के अन्तर पर जम्मू-पठानकोट राजमार्ग के बायीं ओर एक प्रतिष्ठित नगर है । एक जनश्रुति के अनुसार इस नगर को श्री कृष्ण एवं सत्यभामा के सुपुत्र शाम्ब ने बसाया था । कहा जाता है कि इस पुत्र को प्राप्त करने के लिये श्री कृष्ण एवं सत्यभामा को बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना पड़ा था ।

सदृश ही पूजा-पाठ में आस्था एवं आत्म-विश्वास रखनेवाली धार्मिक विचारों की महिला थी ।

रघुनाथ सिंह के पिता ठाकुर चतरसिंह जी के घर बहुत दिनों तक कोई सन्तान न हुई जिसके कारण वे कैहली मण्डी के निकटवर्ती तालाब 'मगेआल' पर बनाए गए रघुनाथ जी के मन्दिर में नित्य भगवान के दर्शनार्थ एवं पूजा-प्रार्थना के लिए जाया करते थे । इस मन्दिर के पुजारी का नाम रघुनाथ दास 'वैरागी' था जो सन् 1857 ई. के स्वतन्त्रता संग्राम की बागी फ़ौज का एक सरगना था और वहाँ से भागकर इस मन्दिर में शरण लिये हुए था । एक दिन जब वह पुजारी ठा. चतर सिंह को भगवान का चरणामृत देने लगा तो गाँव की किसी वृद्धा स्त्री ने ठाकुर साहब को पुत्र जन्म की बधाई दी । ज्ञात होने पर पुजारी रघुनाथ दास 'वैरागी' ठाकुर चतर सिंह को सम्बोधित करते हुए कहने लगे, "ठाकुर जी, आप रघुनाथ जी के परम भक्त हैं । महाराज ने आप पर कृपा करके पुत्र रत्न दिया है । इसका नाम रघुनाथ सिंह रखना । इससे कुछ काल तक हमारा नाम आपके घर में टिका रहेगा । मैं आर्शीवाद देता हूँ कि लड़का दीर्घायु, बुद्धिमान, माता का आज्ञाकारी और रघुनाथ जी का भक्त होगा और आपके वंश का नाम उँचा करेगा ।" इसके पश्चात् ठा. चतरसिंह के तीन और पुत्र-संत सिंह, बलदेव सिंह और नसीब सिंह पैदा हुए ।

फलस्वरूप ठाकुर चतरसिंह ने बालक का नाम रघुनाथ सिंह रख दिया जो सत्य में योग्य एवं मेधावी व्यक्ति के रूप में ही प्रख्यात हुआ । सन् 1897 ई. में इनका विवाह तहसील शकरगढ़ (वर्तमान पाकिस्तान) के गाँव 'मुट्ठी' के नम्बरदार 'चिड़ा चौधरी' की कन्या 'ईशरी देवी' से हो गया । रघुनाथ सिंह की आयु तब ग्यारह-बारह (11-12) बरस की थी और वे छठी- सातवीं कक्षा में पढ़ते थे । चवालीस वर्ष के वैवाहिक जीवन को भोगकर उनकी पत्नी संवत् 1940 ई. में स्वर्ग सिधार गई । उसी वर्ष ठा. रघुनाथ सिंह सम्याल 34 बरस की नौकरी करने के उपरान्त सेवा-निवृत्त हुए थे । दिसंबर 1963 ई. में कैंसर के रोग से इनका जम्मू में 78 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया ।

ठा. साहब के तीन पुत्र ठा. जन्मेज सिंह, बद्री सिंह एवं ठा. गोबिन्द सिंह हुए । उनके बड़े दोनों पुत्रों का भी स्वर्गवास हो चुका है और तीसरे पुत्र ठा. गोबिन्द सिंह असिस्टैंट इनफर्मेशन आफ़िसर के पद से निवृत होकर एक स्थानीय प्राइवेट शिक्षा संस्थान में काम कर रहे हैं ।

ठाकुर रघुनाथ सिंह का बाल्यकाल 'कैहली' मण्डी साम्बा में ही व्यतीत हुआ । उन की औपचारिक शिक्षा साम्बा के एक स्कूल में वर्नाकुलर मिडल तक उर्दू के माध्यम से हुई क्योंकि उन दिनों हिन्दी का अस्तित्व वहाँ प्राय : नहीं के बराबर था । उनके पिता ठा. चतरसिंह के जीवन का अधिक समय अदालतों-कचहरियों में चल रहे मुकदमों में ही व्यतीत होता था जिसके परिणामस्वरूप रघुनाथसिंह के बचपन से ही भरे-पूरे परिवार वाले घर में आर्थिक संकट बना हुआ था । इसका दुष्प्रभाव रघुनाथ सिंह की शिक्षा-दीक्षा पर भी पड़ा । पिता की ज्येष्ठ सन्तान होने के नाते रघुनाथ सिंह को पढ़ाई आधी-अधूरी ही छोड़नी पड़ गई और नौकरी करनी पड़ी । सर्वप्रथम वे मिडल स्कूल कठूआ में सरकारी अध्यापक नियुक्त हुए । तत्पश्चात् एक मुंशी बन गए परन्तु शिक्षा के प्रति उन्हें बहुत लगाव था, जो आजीवन बना रहा । शिक्षा संस्थानों में वे भले ही मिडल कक्षा से आगे न पढ़ सके, पर इसकी कसक उन्हें सदा सालती रही । जिसे वे स्वयं न पा सके उस विद्या को पाने के लिए उन्होंने अपने छोटे भाइयों की हर प्रकार से सहायता की और उनके प्रेरणा-स्रोत बने रहे । ठा. साहब घर में सब भाइयों में बड़े थे, अत : छोटे भाइयों की पढ़ाई-लिखाई में अधिक रुचि लेते हुए उन्होंने उन्हें पिता के समान संरक्षण दिया और योग्य बनाया । फलत : वे सभी बड़े-बड़े पदाधिकारी बन कर सेवा निवृत्त हुए । स्वयं भी उन्होंने स्वाध्याय से उर्दू , फ़ारसी, पंजाबी एवं अनुवाद के माध्यम से संस्कृत ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया । हिन्दी के नीति-साहित्य एवं डोगरी के लोक-साहित्य, लोकगीत, लोककथाएँ, लोकोक्तियाँ, मुहावरा आदि के क्षेत्र में पर्याप्त ज्ञान अर्जित किया जो उनकी रचनाओं के माध्यम से प्रकट हुआ है ।

राजकीय सेवाकाल में जम्मू-काश्मीर राज्य के सुदूरवर्ती गिलगित्त

के निवासकाल में किसी प्राचीन बौद्ध मन्दिर में दबे हुए लकड़ी के सात सन्दूकों में पड़ी हुई पाली-भाषा की अनेक पाण्डुलिपियों का उद्धार करने से ठाकुर साहब के विद्या-व्यसनी होने का परिचय मिलता है । यह बात विक्रमी संवत् 1988 अर्थात् 1931 ई. की है । यहीं पर सम्याल ने शिना[1] भाषा सीखी थी ।

विलक्षण व्यक्तित्व :

ठाकुर साहब लड़कपन में कसरत खूब करते थे । कबड्डी, दौड़ लगाना और वेट-लिफ्टिंग उनकी प्रिय खेलें थीं । सैर बहुत करते थे । घुड़सवारी में भी प्रवीण थे । ठा. रघुनाथ सिंह एक विलक्षण व्यक्तित्व के स्वामी थे और साढ़े पाँच फुट से भी कुछ ऊँची क़द-काठी के छरहरे और पुष्ट शरीर के व्यक्ति थे । उनका सदा मुस्कराता हुआ चेहरा लंबूतरा था । कंढी-निवासियों का परिचय करानेवाली उनकी तीखी और लम्बी नाक थी और आँखें चमकती हुई छोटी, पर बिल्लौरी थीं । उनके वंशजों के कथनानुसार ठा. साहब बंद गले का लम्बा डोगरा कुर्ता, तंग पाजामा और नोकदार पगड़ी पहनते थे । उनके गले में एक दुपट्टा होता था एवं पाँवों में लाख के रंग का जूता पहनते थे । राजनीति में प्रवेश कर लेने के उपरान्त उनकी पगड़ी का स्थान लंबूतरी काली टोपी ने ले लिया । वह शेरवानी पहनने लगे और गले में मफ़लर रखने लग पड़े ।

कसरत, दौड़, कबड्डी आदि से गठीला उनका शरीर एक डोगरी लोकगीत की निम्न पंक्तियों का स्मरण कराता है, जिसमें साम्बा के युवकों को जम्मू के नौजवानों के समान सुन्दर और सुडौल बताया गया है :-

"साम्बा निं साम्बा आक्खिये गोरिये,
साम्बा पद्धरा मदान ।
साम्बे दे गभरू बांकड़े,
जियां जम्मू दे जुआन ।"

1. शिना चीनी भाषा का शब्द है और इसी नाम की जाति गिलगित की पुरानी कौमों में से है । इस कौम के नाम पर ही यहाँ की बोली का नाम भी 'शिना' प्रसिद्ध हो गया ।

रघुनाथ सिंह का व्यक्तित्व विरोधाभासों का सम्मिश्रण है । जहाँ एक ओर वे स्वभाव से हँसमुख व्यक्ति थे और हँसी-मज़ाक करते थे, वहाँ खुलकर क्रोध भी प्रकट किया करते थे, पर थे पूर्णतया निश्छल व्यक्ति एवं स्पष्ट-वक्ता । ये गुण उनको उनकी जन्मभूमि कढी से प्राप्त हुए थे । उनकी एक विशेषता यह थी कि वे बड़ी-से-बड़ी विपत्ति में भी विचलित नहीं होते थे । स्थिति का सामना हँस कर करते थे । उनका स्वभाव से तेज़ होना किसी को बुरा नहीं लगता था क्योंकि उसमें लोगों का ही हित निहित होता था ।

ठाकुर साहब में स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा हुआ था । वे हठीले थे । आदर्शों एवं उद्देश्यों की समानता होते हुए भी किसी अन्य की नेतागिरी के नीचे आना नहीं चाहते थे ।

ठा. साहब जागीरदारी व्यवस्था एवं उसकी सभ्यता में पूर्ण आस्था रखते थे जिसकी झलक उनके कार्य-व्यवहार से मिलती है । वे राज-भक्त व्यक्ति थे और उनके राजभक्त होने का प्रमाण उन्हीं की निम्न पंक्तियों से होता है :-

"गुलाबसिंह इक शेर डोगरा, बिरली जमदी माई,
दिक्ख सयासत, बनी रियासत, हिकमत और बनाई ।
रणबीरसिंह मरजादा बद्धी, सब तदबीर चलाई ।
धरमराज परतापसिंहै गी, आखै सब लुकाई ।
हरिसिंहै स्वराज बनाया दिदे लोक बधाई ।
रघुनाथ सिंह जो नेकी भुल्ले, होदा जन्म कसाई ।"

अर्थात् गुलाब सिंह डोगरा धरती का सिंह था जिसको जन्म देने का सौभाग्य किसी-किसी बड़भागिनी माँ को ही प्राप्त है । उनका राजनीतिविषयक ज्ञान दर्शनीय है जिसके बलबूते पर जम्मू-काश्मीर की अलग रियासत अस्तित्व में आई और इसका गौरव बढ़ा । तदुपरान्त महाराजा रणबीर सिंह ने मर्यादाओं को क़ायम किया और राज्य की भाग्य-रेखा बनाई । उनके परवर्ती महाराजा प्रतापसिंह को सभी लोक 'धर्मराज' पुकारते थे । महाराज हरिसिंह ने स्वराज्य की स्थपना की जिस पर

लोग धन्य-धन्य कह उठे । रघुनाथ सिंह कहते हैं कि जो कोई भी इनके कल्याणकारी कार्यों को भूल जाये, वही जन्म भर के लिये कसाई बने ।

कहा जाता है कि वे स्वंय घर के सामनेवाले चबूतरे पर प्रायः दरबार लगाते थे और लोगों की समस्याओं को सुनकर उसे दूर करने का हर सम्भव प्रयत्न करते थे । उनका सभी प्रकार के लोगों से मेलजोल था । सभा-गोष्ठियों में रुचि रखते थे और दूसरों के साथ विचार-विनिमय करना उनका स्वभाव था । बातचीत करने की कला में बड़े चतुर थे । उनकी बातचीत में जहाँ एक ओर रोचकता होती वहीं दूसरी ओर बहुज्ञता भी । ठाकुर साहब के कैहली मण्डी के घर का वह सूना चबूतरा आज भी वहाँ के वयोवृद्ध निवासियों को उनके मधुर अतीत का स्मरण कराता है ।

उनके समय में मनोरंजन के लिये रामलीला, रासलीला एवं मल्लयुद्धों का आयोजन होता था और इनके प्रबन्ध का उत्तरदायित्व प्रायः ठाकुर साहब ही निभाया करते थे ।

कवि अथवा लेखक का व्यक्तित्व उसकी कृतियों से झलकता है । रघुनाथ सिंह सम्याल ने जहाँ एक ओर 'डोगरा देस जगाई जायां' (डोगरा देस जगाते जाओ), परभात, खो (रूढ़ि), 'इन्दे कोला छुड़को' (इनसे छूटो) आदि अपनी कविताओं में डोगरों में जागृति पैदा करते हुए उन्हें सोच के साथ-साथ अपनी विचार-धारा को भी बदलने की सलाह देकर अपने प्रगतिशील स्वभाव को प्रदर्शित किया है, वहाँ उन्होंने 'फैशन' कविता में सहशिक्षा, स्त्रीशिक्षा और स्त्री-स्वतन्त्रता के विरुद्ध खुलकर लिखा है और रूढ़िवादिता को भी दर्शाया है । युवक-युवतियों को एक साथ पढ़ाने को उन्होंने गर्म तवे पर मक्खन रखने के समान कहा है । स्त्रियों पर रोकटोक एवं प्रतिबन्ध न रखने को उन्होंने 'मर्यादा को भंग कर देना' कहा है । उन्ही के शब्दों में :-

"जागतें कुड़ियें गी किट्ठे पढ़ान्दे ओ,
भखे दे तवे पर मक्खन टकान्दे ओ ।"

अर्थात् लड़के-लड़कियों को एक साथ पढ़ाना चाहते हो और

तपाए हुए तवे पर मक्खन रखना चाहते हो ?

खोड़ियै नत्थ त्रोड़ियै रस्सियां,
बेलै-कबेलै कलब्बें गी नस्सियां
आप- मुहारियां कदे निं बस्सियां ।

अर्थात् नाक का बेसर उतार कर, समय- कुसमय क्लबों में जानेवाली स्वच्छन्द महिलाएँ भले घरों में कभी नहीं समा सकतीं ।

रघुनाथ सिंह एक भक्त व्यक्ति थे । उनकी भक्ति दोहरी भक्ति थी । राजभक्ति एवं प्रभुभक्ति और उन्होंने दोनों में ही गहरी रुचि को बनाये रखा ।

राज्य पद्धति में परिवर्तन उनको किसी प्रकार भी प्रिय न लगा । इसकी पुष्टि उनकी कविता 'भली आजादी' से होती है और परमपिता प्रभु में उनकी दृढ़ आस्था उनकी कविताओं—मैहमां, माली, कृष्णलीला आदि में झलकती है ।

देश-प्रेम की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी । डोगरा देश एवं इसकी भाषा डोगरी को वे हीरे-मोतियों की सच्ची खान मानते थे । अपनी भाषा को वे अपना सर्वस्व मानते थे । अपनी कविता 'डुग्गर ते डोगरी' (डोगरा भूमि और डोगरी भाषा) में रघुनाथ सिंह ने डुग्गर की प्रमुख फ़सलों, फलों शाक-भाजियों, वृक्षों-वनस्पतियों, जीव प्राणियों, वन्य प्राणियों, दुधारू-पशुओं, पंछियों, साजों, प्रमुख स्थानों, नदियों, नालों, महापुरुषों, योद्धाओं, हीरे-पन्नों का सहर्ष उल्लेख करते हुए मातृभाषा की महिमा गायी है । रघुनाथ सिंह मातृभाषा की सेवा को परमसेवा मानने के हिमायती थे । उन्होंने डोगरी के साथ-साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी को अपनाने की भी मन्त्रणा दी है । वे हिन्दी को डोगरी की सहोदरा मानते थे ।

"पंच कहें बिल्ली तो बिल्ली ही सही" वाली कहावत में वे विश्वास नहीं रखते थे । किसी बात का अनुमोदन कितने लोग करते हैं,वे इसे महत्ता नहीं देते थे, प्रत्युत् किस स्तर के लोग किसी बात का समर्थन करते हैं,इस पर अधिक भरोसा करते थे । उन्हीं के शब्दों में—"मुझे यह बात अच्छी नहीं लगती कि जिसे उनचास दानिशवर

ग़लत कहें और एकावन नादान सही कहें तो उस बात को सही मान लिया जाये । परमात्मा ने परिन्द (पक्षी) चरिन्द (पशु) दरिन्द (वन्यप्राणी) बनाये पर मनुष्य का ज्ञान तो किसी को नहीं दिया ।"

व्यावसायिक जीवन

रघुनाथ सिंह का व्यावसायिक जीवन संवत् 1957 अर्थात् सन् 1900 ई. में आरम्भ हुआ जब वे पारिवारिक आर्थिक संकटों से विवश होकर आठ रुपये मासिक वेतन पर कठूआ के एक मिडल स्कूल में अध्यापक नियुक्त हो गये । उस समय वे केवल वर्नाकुलर मिडल तक ही औपचारिक शिक्षा प्राप्त किये हुए थे । उन्होंने सोचा कि अध्यापकीय वृत्ति अपना लेने पर उन्हें पहले लाहौर जा कर नार्मल की परीक्षा भी पास कर लेनी चाहिए । उसी सम्बन्ध में वे जम्मू आये हुए थे कि यहाँ उनकी भेंट मण्डी मुबारक में घूम रहे तीन परिचित नवयुवकों से हुई । उन्होंने ठाकुर साहब को बताया कि रियासत के इन्तजामियां- विभाग में कुछ पदों के लिये शिक्षित नवयुवकों से प्रार्थना-पत्र आमंत्रित किये गये थे और उसी सम्बन्ध में वे तीनों जन भी जम्मू आये हुए थे । उन तीनों को शीघ्र ही नियुक्ति के लिए राजकीय आदेश भी मिलने वाला था । रघुनाथ सिंह ने भी उनके कहने पर तत्काल एक प्रार्थना-पत्र लिखकर गवर्नरी में दे दिया । फलस्वरूप उन्हें भी राज्य के ज़िला उधमपुर में शजराकश (पटवारी) नियुक्त कर दिया गया । नौकरी की अवधि में रियासत के उधमपुर, जम्मू, बसोहली, हीरानगर, रामनगर और गिलगित जैसे स्थानों पर रहते हुये ठा. साहब अपनी अनथक साधना एवं बुद्धि-चातुरी से उन्नति करते गये । पटवारी से मुनसिफ़, मुनसिफ़ से रीडर, रीडर से नायब-तहसीलदार और फिर तहसीलदार बन गये ।

सेवानिवृत्ति के समय वे तहसीलदार के पद पर नियुक्त थे । अपनी तहसीलदारी के जीवन में वे जिन दो बातों के लिये स्मरण किये जाते हैं, वे थीं –

1. मुक़द्दमों में सदा सत्य-झूठ की परख और
2. तुरन्त न्याय ।

उनकी अदालत में किसी भी मुक़द्दमे की चौथी तिथि नहीं पड़ती थी । अधिक-से-अधिक तीन तिथियों में ही निर्णय हो जाता था । उनके कुछ निर्णय डोगरी लोक-कथाओं के निर्णय जैसे चमत्कारी प्रतीत होते हैं । उन्होंने सदा सत्य का ही साथ दिया ।

ठा. साहब ने कामचलाऊ मुलाज़िमों की भाँति नौकरी नहीं की अपितु इसे कर्तव्य समझ कर किया । वे डाँट-डपट करके और नीति से भी कई प्रकार की समस्याओं का समाधान कर करा लेते थे ।

ज़िला कठूआ की तहसील हीरानगर में जब वे तहसीलदार नियुक्त थे तो लोगों ने एक बार वजीर-वज़ारत (डिप्टी कमिश्नर) को तहसीलदार रघुनाथ सिंह की शिकायत करते हुए कहा कि तहसीलदार ने उन्हें बहुत गालियाँ दी थीं जिसके लिये उन्हें दण्ड दिया जाना चाहिए । फलस्वरूप जाँच-पड़ताल के लिये डिप्टी-कमिश्नर साहब स्वयं हीरानगर आये और उन्होंने ठाकुर साहब को भरे इजलास में आने को कहा । ठाकुर साहब वहाँ गये तो उन्हें बताया गया कि लोगों ने उनके विषय में गालियाँ देने से सम्बन्धित शिकायत की हुई थी । ठाकुर रघुनाथ सिंह की डिप्टी कमिश्नर साहब के साथ हुई बातचीत का विवरण रघुनाथ सिंह के ही शब्दों में इस प्रकार है :-

"इन लोगों से कहा जाये कि ये मेरी उपस्थिति में मुझ पर दोषारोपण करें ।" वैसा करने पर जब एक भी व्यक्ति उन पर दोष लगाने के लिये नहीं उठा तो ठाकुर साहब कमिश्नर महोदय को कहने लगे– "इन लोगों का मुझ पर यह दोषारोपण तो बिल्कुल सच्चा है, पर आप ही बताइये कि अपने ही इन निर्धन लोगों को आपस में झगड़ने पर यदि मैं गालियाँ देकर एवं रोब जमाकर इनके पारस्परिक झगड़े न मिटाऊँ तो क्या आप यह चाहेंगे कि इन निर्धनों को मुक़द्दमेबाजी में फँसाकर इनसे धन बटोरूँ और इन्हें उजाड़ कर रख दूँ ?" कमिश्नर साहब रघुनाथ सिंह के मन में निर्धनों के प्रति असीम दया देख कर हतप्रभ होकर रह गये । उनके पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं था ।

उनकी न्यायप्रियता से ही सम्बन्धित एक अन्य घटना भी उल्लेखनीय है । तब वे बसोहली में तहसीलदार नियुक्त थे । उन

दिनों बिलावर बसोहली तहसील में था । एक ठक्कर घराने मे पैतृक सम्पत्ति के बँटवारे का मुक़द्दमा चल रहा था । यह मुक़द्दमा ठाकुर साहब की वहाँ नियुक्ति के पहले तीन-चार साल से चल रहा था। सगे- सहोदरों में इतनी शत्रुता बढ़ चुकी थी कि पिता की मृत्यु पर एक भी उसमें शामिल नहीं हुआ था ।

मुक़द्दमे की तिथि निश्चित हो चुकी थी । ठाकुर साहब के कानों तक यह रहस्य पहुँच चुका था कि छोटी बहू के दहेज में आये काँसे के तीन थाल झगड़े का मूल कारण थे । ठाकुर साहब ने झगड़े की जड़ को पकड़ लिया था और मुक़द्दमे के लिये निश्चित तिथि को कचहरी में उपस्थित भाइयों में से छोटे को कहने लगे— इस मुक़द्दमे का निर्णय मैं तुम्हारे घर बैठ कर वहीं भात खाकर करना चाहता हूँ, पर मेरे साथ तुम्हारे दूसरे भाई भी तेरे ही घर में भात खायेंगे ।

उस ज़माने में तहसीलदार अपनी तहसील का राजा होता था, अत : उसकी कही बात को कोई टाल नहीं सकता था । पदयात्रा करते-करते उसके भाई और घोड़ी पर सवार तहसीलदार रघुनाथ सिंह जी तीसरे दिन बिलावर से कुछ दूरी पर स्थित उस गाँव में, जा पहुँचे । ठाकुर साहब ने आदेश दिया कि चार थालियों में भात परोसकर उन चारों को (तहसीलदार और मुक़द्दमेबाज़ के अन्य तीन भाइयों को) दिया जाये पर उन चार थालियों में से तीन काँसे की वही थालियाँ हों जो छोटी बहू के दहेज में आई थी ।

परिणामस्वरूप चार थालियाँ आ गई और भात भी पहुँच गया । ठाकुर साहब ने काँसे की तीनों थालियाँ उन तीनों भाइयों को (एक-एक) दिला दी और चौथी अपने सामने रखकर उसमें भात परोसने को कहा । भोजन के उपरान्त उन्होंने तीनों भाइयों से कहा कि जिस-जिस थाली में उन्होंने भोजन किया था, उस-उसको वे अपने-अपने घर ले जाएँ । साथ ही, यह भी समझाया कि क्योंकि उन तीन थालियों के कारण उन्होंने आपसी सम्बन्धों को बिगाड़कर अपने-अपने घरों की सुख-शान्ति को ही समाप्त कर दिया था, इसीलिये उनका यही फ़ैसला था कि थालियों को बाँटकर वे पुनः एक हो जायें । फलतः चारों भाई मिल गये । समझौता हो गया

और उन्होंने विश्वास प्रकट किया कि वे सभी भाई अन्य पैतृक-सम्पत्ति का बँटवारा भी उसी प्रकार शान्ति एवं न्यायपूर्ण ढंग से ही कर लेंगे ।

ठाकुर साहब के एक ईमानदार और सत्यनिष्ठ डोगरा पदाधिकारी होने का प्रमाण उनके उस फ़ैसले से भी मिलता है जिसमें उन्होंने सन् 1934-35 ई. में जम्मू के एक ठेकेदार के विरुद्ध निर्णय सुनाया था । तब वे तहसीलदार जम्मू नियुक्त थे । ठेकेदार सोनी जम्मू नगर के निकट प्रवाहिनी तवी[1] नदी से बिना किसी सरकारी आदेश के स्वेच्छया पत्थर-बजरी, कंकर आदि पंजाब ले जाया करता था । पकड़े जाने पर जब मुक़द्दमा चला और केस की सुनवाई के लिये ठाकुर साहब के पास आया तो ठेकेदार हज़ार-हज़ार रुपयों की पाँच थैलियाँ लेकर ठाकुर साहब के पास रिश्वत देने गया । डोगरी में एक कहावत है जिसका हिंदी रूपांतर है कि "रोज़े बख्शाने आया तो नमाज़ गले में पड़ गयी ।" ठेकेदार को लेने के देने पड़ गये । ठाकुर साहब ने न केवल थैलियों को ही ठुकराया अपितु इस प्रकार का दुस्साहस करने वाले ठेकेदार को 36000/-रुपयों का आर्थिक दण्ड और एक सप्ताह का कठोर कारावास का दण्ड भी दिया । इस सम्बन्ध में तहसीलदार रघुनाथ सिंह को बड़े-बड़े लोगों ने अपना निर्णय बदल देने की सिफ़ारिश भी की । उन्हें डराया-धमकाया भी गया पर वे अपने निर्णय पर अटल रहे । सनसनी भरे इस निर्णय को तत्कालीन प्रसिद्ध समाचार-पत्रों - "इन्कशाफ, अमर, रणबीर एवं पासबान आदि में मोटे-मोटे अक्षरों मे प्रकाशित किया गया । इस फ़ैसले की नक़ल लाहौर से छपनेवाले उर्दू एवं अंग्रेज़ी के समाचार पत्रों में भी छापी गयी थी । अपने इस फ़ैसले में उन्होंने सरकार की कार्य-व्यवस्था पर भी टीका-टिप्पणी करते हुए लिखा था कि "जिस हकूमत में प्रति एक सौ रुपयों की आय में से एक हज़ार रुपया चोरी चला जाता हो, उस देश का भला चाहनेवाला मंत्रीमंडल न जाने कहाँ सोया हुआ है ?"

1. भद्रवाह से उपर बासकुंड से निकलनेवाली, इस नदी को पुराणों मे तौवी, तापी, अर्कनन्दिनी, पयोष्णी, सूर्यपुत्री आदि नामों से भी बताया गया है ।

इस प्रकार लोगों के परस्पर के झगड़े वे इस ढंग से सुलझा देते कि दोनों ही पक्ष प्रसन्नतया विरोध मिटाकर एक हो जाते । कई बार तो ऐसा होता था कि कचहरी में दोनों पक्षों के वकील बहस के लिए खड़े होते थे पर रघुनाथ सिंह जी दोनों पक्षों को समझा बुझाकर सुलह-सफ़ाई करवा कर उन्हें भेज देते थे । तहसीलदारी के पद पर आसीन होते हुए भी वह लोगों में इस प्रकार घुल-मिल जाते कि लोग उन्हें अपने घर का बड़ा- बुजुर्ग समझ कर उनका आदर-सत्कार करते थे । ठाकुर साहब के एक मित्र नरसिंह दास 'नर्गिस' एक बार इन्हें मिलने रामनगर गये । पर तहसीलदार रघुनाथ सिंह समय से पूर्व ही घर से जा चुके थे और घर से एक मील की दूरी पर बहुत नीचे एक नाले पर बनाए जाने वाले पुल पर सैकड़ों श्रमिकों के साथ काम में जुटे हुए थे । वे स्वयं भी एक बड़े से पत्थर को धक्का लगा रहे थे । उनके मित्र द्वारा इस का कारण पूछे जाने पर वे कहने लगे कि श्रमिकों के साथ यदि वे स्वयं काम नहीं करेंगे तो काम कैसे होगा ?बिना सरकार की आज्ञा के एवं बिना किसी इंजीनियर द्वारा बनाए गये नकशे के नाले पर एक पुल बनाया जा रहा था ताकि लोगों को नाला पार करने में तकलीफ़ न हो । सैकड़ों लोग वहाँ पारिश्रमिक लिये बिना काम कर रहे थे । ठाकुर साहब उन्हें बीड़ी-सिगरेट, गुड़ जैसी छोटी-मोटी चीज़ें देकर अपना बना लेते थे । सन् 1947 ई. में देश के बँटवारे ने उन्हें एक सीमारक्षक के रूप में उभारा और वे सिविल सुरक्षा कोर्ट के अधिकारी भी बने ।

इस प्रकार 34 वर्ष की निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण सेवावृत्ति के उपरान्त विक्रमी संवत् 1997 अर्थात् ई. सन् 1940 में ठाकुर रघुनाथ सिंह मान-सम्मान के साथ सेवानिवृत्त हो गये ।

समाज-सुधारक

ठाकुर रघुनाथ सिंह डोगरा-समाज में एक सक्रिय समाज-सुधारक के रूप में भी स्मरण किये जाते हैं । सेवावृत्ति से निवृत्त होकर ठाकुर साहब समाज-सुधार के कामों में बढ़-चढ़कर रुचि लेने लगे और अपना शेष जीवन समाज-सेवा के लिये अर्पित करने में जुट गये । कट्टर रूढ़िवादी परिवार में जन्मे-पले रघुनाथ सिंह को आर्यसमाज जैसे धार्मिक आन्दोलन ने संकीर्णता एवं रूढ़िवादिता की सीमा-रेखा से बाहर कर दिया । छुआछूत के रोग से वे सदा मुक्त रहे । उनका सबसे पहला कार्य समाज के दलित एवं तिरस्कृत वर्ग-हरिजन जिनकी स्थिति शोचनीय बनी हुई थी—को स्वर्ण हिन्दुओं के साथ उनके कुओं या जलाशयों से पानी भरने का अधिकार दिलाना था । रघुनाथ सिंह ने पिछड़ी विचारधारा वाले साम्बा जैसे नगर के लोगों के साथ हरिजनों को पानी भरने के लिये बड़ी जातियों के हिन्दुओं के कुओं पर चढ़ाया । यह घटना विक्रमी संवत् 1977 अर्थात् 1940 ई. की है ।

इतना ही नहीं, उस समय राजपूतों में भी स्पष्ट तौर पर दो वर्ग बन चुके थे । राजघरानों से सम्बन्ध रखनेवाले उच्च-राजपूत एवं खेती का काम करनेवाले हलधारक-राजपूत । ऊँचे राजपूत हलधारकों की कन्याओं से विवाह तो कर लेते थे परन्तु अपनी लड़कियों का विवाह उनके साथ नहीं करते थे । उनके साथ एक पंक्ति में बैठकर भोजन नहीं करते थे । हुक्का नहीं पीते थे । रघुनाथ सिंह ने समाज की तनिक परवाह किये बिना अपनी पोती का विवाह हलधारक-राजपूत घराने में करके समधियों को राजघरानों के राजपूतों की पंक्ति में लाकर बिठा दिया ।

किसी की मृत्यु के अवसरों, मृतकों के अर्धवार्षिक (डो. अद्धबारखी) वार्षिक (डो.बारखी), एवं चतुवार्षिक (डो.चब्हरी) आदि पर किये जाने

वाले दान के लिये कर्ज़ उठाना और फिर आयु भर उस ऋण से मुक्त ही न हो सकना जैसे बुरे रीति-रिवाजों को खत्म करने के लिये उन्होंने अपनी कविता को माध्यम बनाया और लोगों को कर्ज़ उठाने से रोका । इस काम का प्रारम्भ उन्होंने अपने ही घर से किया । अपनी पूज्या माता एवं धर्मपत्नी के देहावसानों पर ठाकुर साहब ने किसी भी प्रकार की रीति-रस्म नहीं की थी । लोक-लाज बचाए रखने के लिये बुरे-रिवाज़ों को छोड़ देने की दुहाई उन्होंने अपनी कविता 'इन्दे कोला छुड़को' (इनसे छुटकारा पाओ) में बड़े स्पष्ट शब्दों में दी है । मरे हुए लोगों की समाधियों की पूजा छोड़ देने की बात भी इसी कविता में कही गई है ।

कबीर के स्वर में रघुनाथ सिंह ने कविता के माध्यम से डोगरा लोगों मे प्रचलित कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों, जैसे बात-बात पर गऊ की सौगन्ध खाना, लोक-लाज के भय से उधार उठाकर व्यर्थ जादू-टोना के रस्मो-रिवाज तथा छुआछूत आदि को रोकने के लिये इन्होंने डोगरों पर कविता के माध्यम से व्यंग्य-बाण चलाकर उन्हें सुधारना चाहा ।

राजनैतिक जीवन

उनका राजनैतिक जीवन प्रजा परिषद् के आन्दोलनों से प्रारम्भ हुआ । ठा. रघुनाथ सिंह सम्याल चूँकि एक जागीरदार घराने में पैदा हुए थे, इसलिए उनका लालन-पालन भी जागीरदारी व्यवस्था के संस्कारों से ही हुआ था । पर उनके घर में ही राजनैतिक बवंडर पैदा करनेवाला उनका सुपुत्र कुंवर बद्रीनाथसिंह पैदा हुआ । ठा. साहब ने तो उसे इलाहाबाद कानून पढ़ने भेजा था, पर वह 'ला' की डिग्री के साथ-साथ कांग्रेस पार्टी के प्रोग्राम भी संग लेकर घर लौटा । उसने वकालत के स्थान पर कांग्रेस के काम को महत्त्व दिया और उसमें बढ़-चढ़कर रुचि लेनी प्रारम्भ कर दी । राजभक्त परिवार में उसका बहुत विरोध भी हुआ पर बद्रीसिंह जी भी अपने निर्णय पर डटे रहे । किसी के कहने-कहाने से भी अपने इरादे से टस से मस नहीं हुए ।

पिता-पुत्र उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुव की भाँति अपनी-अपनी मर्यादा

पर अटल थे । उनकी मानसिक पीड़ा को कोई न समझ सका । विधि की विडम्बना देखिये कि एक ओर पुत्र के लिये असीम ममता थी और दूसरी ओर संस्कारों से प्राप्त राजभक्ति का मोह, जिसका विरोध करना वे सोच भी नहीं सकते थे । बद्रीसिंह के मित्र कैहली मण्डी के निवासी पं. पीताम्बरनाथ शास्त्री के अनुसार जब बद्रीसिंह की मृत्यु हो गई तो ठा. साहब ने स्वयं उन्हें सुनाया कि बद्रीसिंह द्वारा कान्फ्रैंसों में दिये जानेवाले भाषण वे स्वयं अपने हाथों से लिखकर देते थे । कितना अनूठा विरोधाभास था ।

ठा. साहब का अपना राजनैतिक जीवन जब प्रजा-परिषद् के आन्दोलन से आरम्भ हुआ, तब बद्रीसिंह जी रियासत के खुराक-विभाग में डिप्टी डायरेक्टर के पद पर नियुक्त थे । उन्होंने जब पिता से कहा, "बापू जी । आप को इस आयु में राजनीति के पथ पर नहीं पड़ना चाहिये, तो उनके पास बैठे लोगों के हृदय काँप रहे थे कि ठा. साहब क्रोध में आकर न जाने क्या-क्या कहें, अथवा कर बैठें, पर उन्होंने बड़े संयम से कहा—"प्रतीत होता है कि वर्तमान राजनीति न केवल जम्मू भू-भाग के लिये बल्कि डोगरा लोगों के लिये जान बूझकर अपमानजनक बनायी जा रही है । ऐसा लगता है कि वर्तमान सरकार हमें घसियारे जैसे दयनीय पात्र बनाना चाहती है । यदि हम एक होकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करें तो सरकार को अपनी नीति बदलनी ही पड़ेगी ।" इतना कहकर वे तन, मन, धन से प्रजा परिषद् द्वारा चलाये गये आन्दोलन में कूद पड़े ।

ठाकुर साहब ने सेवानिवृत्त होकर अपनी पत्नी के परलोक गमन के पश्चात् एकान्त में बैठकर ईश्वर-भजन करने की बात सोच रखी थी क्योंकि जीवन-यापन के लिए उनकी पेंशन उनके लिए पर्याप्त थी, परन्तु भारत के बँटवारे, सांप्रदायिक झगड़ों एवं डोगरा लोगों की सरलता-शराफ़त, विवशता का उपहास होता देखकर वे राजनीति के अखाड़े में कूद पड़ने पर विवश हो गये और बन्दा बैरागी की भाँति ठाकुर रघुनाथ सिंह एकान्त वास का पथ त्यागकर राजनीति के क्षेत्र में उतर आये । उनका राजनीति से सम्बन्धित प्रथम भाषण 1950 ई. (सं. 2007 वि.) को अमर राजपूत-सभा के वार्षिक

अधिवेशन में हुआ । तत्पश्चात् समूचे जम्मू प्रान्त में घूम-घूमकर इन्होंने डोगरा जाति को उसके गौरव का स्मरण करवानेवाले और उनमें आत्मविश्वास जगानेवाले ज़ोरदार ग्यारह भाषण किये । प्रजा परिषद ने इनके अन्दर के राजनीतिज्ञ को पहचानते हुए इन्हें अपनी पार्टी में शामिल कर लिया । इनकी ज़ोरदार तकरीरों से सरकार भयभीत हो गई और इनकी पेंशन बन्द कर दी गई । ठाकुर साहब फिर भी जब अपने पथ पर डटे रहे तो इन्हें सिक्योरिटी ऐक्ट के अन्तर्गत 1951 ई. (30 ज्येष्ठ संवत् 2008 विक्रमी) को जम्मू की सेंट्रल जेल में क़ैद कर लिया गया । वहीं दस मास के कारावास में ठाकुर साहब ने भगवद्गीता का डोगरी में अनुवाद किया जो इनकी डोगरी साहित्य को अनुपम देन है । सम्याल जी इसे छपवाने की सोच ही रहे थे कि प्रजा परिषद् ने सत्याग्रह का शंखनाद कर दिया । सम्याल जी को पुन : दूसरी बार 1952 ई. में पाँच साल के लिए जेल का दण्ड भुगतने के लिए श्रीनगर जेल में भेज दिया, और 500/- रुपये का जुर्माना भी किया गया । आठ मास के कारावास के उपरान्त एक राजनैतिक समझौते के अन्तर्गत 1953 ई. में इन्हें रिहा कर दिया गया । फाल्गुन 2010 वि. (1953 ई.) को पुन : इनकी पेंशन चालू कर दी गई ।

ठाकुर साहब एक निडर और निश्चय के पक्के नेता थे । यदि वे चाहते तो राज्य सरकार से विरोध का व्यवहार छोड़कर अपने लिये अथवा अपने पुत्र बद्रीसिंह के लिए माल व न्याय-विभाग में कोई बड़ी पदवी भी ले सकते थे । वे इस बात से भी कभी भयभीत नहीं हुए कि सरकार कहीं उनके भाई कर्नल बलदेव सिंह और सुपुत्र बद्रीसिंह (जो सरकारी कर्मचारी थे) को इनके सरकार विरोधी भाषणों के कारण कोई हानि न पहुँचाये । वे हज़ारों की संख्या में एकत्रित श्रोताओं को स्पष्टतया कहते थे, "यह मेरा अपना कर्म ऐ । मेरे भ्रायें-बन्धुयें ते साकें — नाते दा अपना रस्ता ऐ । ओहूजियां चाहुन करन । फ्ही बी सरकार जो चाहु करै ।

यानी मेरा अपना कर्म है । मेरे भाई बन्धु एवं सम्बन्धियों का अपना पथ है । वे जैसा चाहें करे । मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है । फिर भी सरकार जो चाहे करे ।

सन् 1957 ई. के असेम्बली चुनाव में सम्याल जी साम्बा नगर के दक्षिणी हल्के से प्रजा परिषद् की टिकट पर खड़े भी हुए पर अपने प्रतिद्वन्दी रामप्यारा सराफ से हार गये । यह उल्लेखनीय है कि उनकी हार ग़ैरसियासी लोगों के लिये— जो सियासत में दाखिल होना चाहते थे—एक लतीफ़ा बन कर रह गयी ।

वोटों की गिनती जम्मू के मण्डी मुबारक स्थान पर हो रही थी । रात को देर से चुनाव परिणाम घोषित होने लगे, जिसमें साम्बा दक्षिण की सीट पर रामप्यारा सराफ को विजयी घोषित हुआ सुनकर ठाकुर साहब लम्बी साँस खींचते हुए मज़ाकिया लहजे में बोले "वाह । लोगो वाह । कल के छोकरे से मुझ बूढ़े की खूटे उस्तरे से हज़ामत करवाकर आपको क्या मिला ? लोग यदि मेरी शव-यात्रा निकालें तो साम्बा के किले से लेकर चीची देवी (लगभग तीन किलोमीटर) तक के रास्ते पर सरसों के दाने को संचरित होने के लिये सम्भवतः स्थान न मिले पर वोट के समय 'छू' उन्हीं के शब्दों में :-

"वाहु लोको, कल्ला दे छोकरे कोला मेरे जनेहु बुड्ढे दी खुण्डे उस्तरे कन्नै टिंड कराइयै तुसें केहु खट्टेआ ? जे मेरा किड़ा कड्ढना होऐ तां किले शा चिच्ची देवी तक सरेयां नी सऽजरै ते बोटें बेलै छू ।"

साहित्यिक जीवन

यह भी अद्भुत संयोग की ही बात है कि ठा. रघुनाथ सिंह सम्याल का राजनैतिक एवं साहित्यिक जीवन साथ-साथ ही प्रारम्भ हुआ । लोगों ने उनके साहित्यिक रूप को तभी देखा जब वे राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे । ये दोनों ही काम उन्होंने अपनी सेवा-निवृत्ति के उपरान्त प्रारम्भ किये । कविता को उन्होंने अपनी विचाराभिव्यक्ति का सुलभ साधन बनाया ।

कहावत है 'जहाँ रेगिस्तान वहाँ नखलिस्तान' । कंढी की भूमि निर्जन तो नहीं, निर्जल अवश्य है । भूगर्भ शास्त्रियों की खोज अनुसार इस धरती में पानी नहीं है पर कभी-कभी प्रकृति भी चमत्कार पैदा करती है और कहीं थोड़ी-सी हरियाली अथवा बावली में नये जलस्रोत

फूट निकलते हैं और वहाँ दस-दस क्यूसिक तक पानी आ जाता है ।

ऐसा प्रतीत होता है कि ठा. रघुनाथ सिंह का साहित्य-क्षेत्र में सहसा प्रवेश भी इसी प्रकार का आश्चर्य था । डुग्गर के कंढी प्रदेश ने जहाँ एक ओर बड़े-बड़े फ़ौजी जनरल एवं सुयोग्य कलाकारों-चित्रकारों को जन्म दिया वहाँ बड़े-बड़े कवियों-लेखकों को भी पैदा किया । ठा. साहब को स्वाध्याय के फलस्वरूप डोगरी, पंजाबी, हिन्दी, उर्दू , फ़ारसी एवं बलती का अच्छा-खासा ज्ञान था । डोगरी लोकजीवन से सम्बन्धित अनेक मुहावरे-कहावतें एवं हिन्दी साहित्य के नीतिपरक दोहे ठा. साहब को कण्ठस्थ थे, जिन्हें वे साहित्य-क्षेत्र में पदार्पण करने से पहले ही अपने साथ उठने बैठनेवाले बड़ो-छोटों को सुनाया करते थे । इनको कहने-सुनाने का उनका निराला ही ढंग था, जो कल-कल करते नालों एवं छल-छल करते झरनों का-सा प्रवाह लिये एवं मस्ती भरा होता था ।

ठा. साहब कई बार साधारण सी बात को भी इस प्रकार कहते थे कि उनके मुख से निस्सृत होने पर उनका वचन कविता का प्रवाह लिये हुए प्रतीत होता था । कैहुली मण्डी का एक नवयुवक, जब ढक्की के साथ पानी के निकास के लिये, नाली बनाने लगा तो ठा. साहब ने उसे ढक्की के साथ नाली निकालने से रोकते हुए जो बोल कहे, वे कविता में इस प्रकार थे :

" पत्थर नेई पुट्टेआं बीबा,
एह् बूहटे नेई बड्ढ,
नाली कड्ढो ते नाला बनदा,
नाले दी बनदी खड्ड ।
ते ढक्की रूढ़ी जानी ऐ "

अर्थात् हे भलेमानस । न तो यह पत्थर उखाड़ और न ही ये वृक्ष काट । नाली निकालो तो नाला बन जाता है और नाले से खड्ड बनती है और इस प्रकार ढक्की बह जाएगी ।

डोगरी साहित्य में अपने जीवन के संध्याकाल में प्रवेश करने वाले साहित्यकार सम्याल ने दस-पन्द्रह वर्षों में ही अपना विशेष

स्थान बना लिया । हालाँकि प्रजा परिषद् का आन्दोलन एक आक्रोश के रूप में उभरा तो ठाकुर साहब राजनीति एवं समाज के बदलते मूल्यों की झुँझलाहट से क्षुब्ध होकर अपनी कविता को लेकर उस आन्दोलन में उतर आये । उनकी आक्रोश भरी कविता—जिसे उन्होंने एक जलसे में पढ़ा था—के बोल इस प्रकार है :

"बागें गी पुच्छो बजारेंगी पुच्छो,
डोगरें जित्ती कश्मीर कियां ?

उसके पश्चात् उनका कवि आगे ही आगे बढ़ता गया और राजनीति से नाता टूटता गया । इन्होंने लगभग चौदह[1] कविताएँ लिखी हैं, जिनमें से कुछ का सम्बन्ध राजनीति से है । ऐसी कविताओं का ऐतिहासिक मूल्य भले ही हो पर साहित्यिक मूल्य नहीं के बराबर है ।

अपने गिलगित निवासकाल में किसी प्राचीन बौद्ध-मन्दिर में दबी पड़ी लकड़ी की सात पेटियों मे पड़ी हुई पाली भाषा की अनेक पाण्डुलिपियों का उद्धार करने से ठाकुर रघुनाथ सिंह के विद्याव्यसनी होने का प्रमाण मिलता है । भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित गिलगित्त का वह भाग जहां ठा. साहब तहसीलदार नियुक्त थे, अब पाकिस्तान के अधिकार में है । राज्य सरकार का एक आदेश था कि गिलगित्त में नियुक्त जो कोई भी पदाधिकारी गिलगित्ती बोली सीख लेगा उसे विशेष पुरस्कार एवं भत्ता जो 150/- रुपये था, दिया जायेगा । ठा. रघुनाथ सिंह ने पढ़े लिखे गिलगित्ती बन्धुओं से उनकी भाषा सीखकर एक लघु व्याकरण पुस्तिका 'शिना' भी लिखी जिसे तत्कालीन कमाण्डर-इन-चीफ जनरल करियप्पा ने प्रकाशित करवाया । उनकी स्मरण-शक्ति बड़ी प्रखर थी जिसके फलस्वरूप उन्हें डोगरी, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी आदि के लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों के हज़ारों शेर कण्ठस्थ थे ।

---

1. 1. प्रभात 2. डोगरा देस जगाई जाया, 3. खो, 4. फैशन. 5. इन्दे कोला छुड़को, 6. भली अजादी 7. छाहु बल्हेरी छोली 8. कविता-रत्न, 9. डुग्गर ते डोगरी, 10. भजन 11. महमां 12. माली, 13. कृष्ण-लीला 14. गीता-महात्म

उन्होंने डोगरी, पंजाबी, हिन्दी, उर्दू में बहुत-सी कविताएँ लिखीं । उनकी सभी डोगरी कविताएँ 'कविता रत्न' नामक कविता-संग्रह में 1967 ई. में प्रकाशित हुई थीं और हिन्दी-उर्दू-पंजाबी की कई कविताएँ रणबीर, चाँद आदि पत्रों में प्रकाशित हुईं[1] । सम्याल ने कविता की अन्य विधाओं—जैसे, टप्पा, छन्द, कवित्त, दोहा, बार आदि में भी लिखा है ।उनका कविता सुनाने का ढंग भी बड़ा रोचक था । ठा. रघुनाथ सिंह ने डोगरी, हिन्दी उर्दू में सैकड़ो लघु [2]कहानियाँ भी लिखी हैं जो प्रायः घटना एवं पात्र प्रधान हैं । उनका शिल्प लोककथाओं जैसा ढीला-ढाला है । कुछ कथाओं के शीर्षक भी लोककथाओं जैसे है । इनमें से कुछ हैं 'मौलवी और मिराशी, बाबा दयालसिंह, हिजड़े, एहसान फ़रामोश, झूठ की हद, नमकहलाल, मुतफर्कनोट, इक पक्खरू, साहूकार, करारनामा, परख, कच्चू दा टोटा, शर्त, सेवा का फल, जैन्तर-मैन्तर, भूत, पढ़ना ते सोचना, लाल बुझकड़, ललारी नूरभाई, प्रोफेसर ते मल्लाह, रमजान, बारां राजे, मंगू दी डैन, मथरे दी लाड़ी, दीदा दलेर, प्रेत, हिम्मत ते अकल आदि ।

ठाकुर रघुनाथ सिंह का इतिहास लेखन की ओर भी विशेष रूझान था । चारों डोगरा शासकों—महाराजा गुलाब सिंह, रणबीर सिंह, प्रताप सिंह और हरिसिंह—के जीवन पर प्रकाश डालनेवाला इतिहास पाण्डुलिपि के रूप में उनके वंशजों के पास सुरक्षित पड़ा है ।

साहित्य क्षेत्र में मूल रचनाओं के अतिरिक्त ठा. रघुनाथ सिंह ने डोगरी को सम्पूर्ण श्रीमद्भगवद्गीता का डोगरी में पद्यानुवाद भी दिया जो उनकी बहुमूल्य देन है । इनके फुटकर लेख जैसे पाँच अंगुलियों की बहस, चनैनी एजीटेशन सम्बन्धी और राजनीति पर व्यंग्यात्मक कई लेख अप्रकाशित पड़े है ।

कुल मिलाकर देखा जाये तो रघुनाथ सिंह सम्याल ने न केवल रचना-संख्या की दृष्टि से ही यहाँ तक कि रचना—सामग्री की दृष्टि से भी डोगरी साहित्य को बहुरंगी साहित्य दिया है ।

---

1. उनकी 97 पृष्ठों की डायरी अनुसार
2. इनकी पाण्डुलिपियाँ ठा. साहब के पौत्र ठा. मनुरायसिंह के पास सुरक्षित हैं ।

उनका साहित्य डोगरी मुहावरों, लोकोक्तियों एवं कहावतों से भरा हुआ पाठकों को साहित्यकार रघुनाथ सिंह के गूढ़ जीवन अनुभवों का परिचय कराता है । श्री नरसिंह दास 'नर्गिस' ने इनके साहित्यिक योगदान के विषय में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए लिखा है :

> "जियां संस्कृत बिच कवी कलीदास (कालिदास), बंगाली बिच डाक्टर टैगोर, हिंदी बिच गोस्वामी तुलसीदास ते पंजाबी च सय्यद वारिसशाह उच्ची पदवी पर होये न इय्यां गै डोगरी भाषा बिच ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल बी महांकवी न "।

अर्थात् जिस प्रकार संस्कृत में कवि कालिदास, बंगाल में रवीन्द्र नाथ ठाकुर, हिन्दी में गोस्वामी तुलसीदास और पंजाबी में सय्यद वारिस शाह ऊँची पदवी पर विराजमान हुए हैं, वैसे ही डोगरी भाषा में ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल भी महाकवि हैं ।

सम्पादक 'चाँद' के शब्दों में, -

> "जदूं साल 1947 दे अखीर च चांद दे दफतरै च पधारे तां अपने कन्नै अपनियां डोगरी, हिन्दी ते हिन्दोस्तानी च लिखी दियां ग्यारहां कवितां, गीतें, कवितें ते दोहुड़ें दे रूप्पै च लेई आए हे । किन्ने दिन गै एह् औन्दे रेह् । बड्डले शा संजा धक्कर सुनने-सुनाने दा कम्म चलदा रेहा । मेरे दफ्तर खरा किट्ठ होई जंदा रेहा ते तहसीलदार साहब गी सराहुना मिलदी । अखबार चान्द बिच्च इन्दियां डोगरी कविता छपने दा मुण्ढ बज्झी पेआ ते डोगरी दुनियां च इन्दी सोहुनी शायरी दी जढ़ी साहित्य ते राजनीति दा खूबसूरत मेल, रमज औआखें दी जान हे, धाक बेही गई । इन्हें दिनें गै जम्मू दी डोगरी संस्था ने सप्ताहक डोगरा कवि सम्मेलन दा सिलसिला शुरू कीते दा हा, ते इयां सैकड़ें गबरूयें गी डोगरी कविता दे रस्ते पाई दित्ते दा हा , पर जिस बेल्ले लोकें ठाकुर रघुनाथ सिंह जी दियां कविता सुनियां तां सारे गै बाह-बाह करि पे " ।

अर्थात् जब वर्ष 1947 के अन्त में वे "चाँद" के कार्यालय पधारे तो अपने साथ डोगरी, हिन्दी एवं हिन्दुस्तानी में स्वरचित ग्यारह कविताओं, गीतों, कवित्तों एवं दोहों के रूप में-ले आये थे । कितने ही दिन ये आते रहे । प्रातः से सायं तक सुनने-सुनाने का कार्यक्रम चलता रहा । मेरे कार्यालय में अच्छा-खासा जमाव हो जाता रहा और तहसीलदार साहब को दाद मिलती । अखबार 'चाँद' में इनकी डोगरी कविताओं को प्रकाशित करने का शुभारम्भ हो गया और डोगरी जगत् में इनकी सुन्दर काव्यकला की— जो साहित्य एवं राजनीति का सुन्दर सम्मिश्रण थी—व्यंग एवं कहावतों का प्राण थी—धाक जम गई । इन्हीं दिनों डोगरी संस्था ने साप्ताहिक डोगरी कवि-सम्मेलनों का सिलसिला शुरू किया हुआ था - जिसने सैकड़ों युवकों को डोगरी कविता के पथ पर लाकर खड़ा कर दिया था । पर जब जनता ने ठाकुर रघुनाथ सिंह जी की कविताएँ सुनी तो सभी अश-अश कर उठे ।

'डोगरा देस जगाई जाया' (डोगरा देस को जगाते जाओ) कविता में कवि ने डुग्गर भूभाग की सीमा रेखा जम्मू से लेकर नूरपूर, काँगड़ा और हमीरपुर तक खींची है जहाँ वैशाखी को भाँगड़ा नृत्य आयोजित होता है । अपनी कविता में इन्होंने डोगरा लोगों को जहाँ एक ओर स्वभाव से सुशील एवं गहरे कुएँ के जल के सदृश शीतल बताया है वहाँ शत्रु के लिये काल-स्वरूपी भी कहा है । कवि रघुनाथ सिंह के कथनानुसार डोगरा लोग रेशम के समान कोमल हृदय के होते हुए भी युद्ध भूमि में वज्र से भी कठोर होते हैं । कवि की "कुंगले पट्ट ते नर्म बी डोगरे, लग्गै लड़ाई तां गर्म बी डोगरे" अर्थात् जो स्वभाव से कोमल एवं रेशम के सदृश नर्म हैं, वही डोगरे रणभूमि में वज्र से भी कठोर हो जाते है । पंक्तियो को पढ़कर संस्कृत के विख्यात नाटककार भवभूति की इस पंक्ति का - "वज्रादपि कठोरानि मृदुनि कुसुमादपि" का स्मरण आ जाता है । कवि बदलती हुई राजनीति से विचलित होकर कहते हैं कि स्थिति इस प्रकार की प्रतीत होती है कि अगाध जलवाली नदी में डोगरों की भाग्य किश्ती एवं नावक बिना पतवार-नाव के समान हैं, फिर भी उन्होंने डोगरा लोगों

से कहा है कि वे धैर्य न छोड़ें और पूरा प्रयास करें ताकि समक्ष आया हुआ कोई भी वैरी जीवित न लौट पाये ।

'डुग्गर ते डोगरी बोली' (डुग्गर एवं डोगरी भाषा) कविता में पवित्र देव स्थानों जैसे काँगड़ा में ज्वाला जी, त्रिकूट पर्वत पर वैष्णो माता, चनैनी में शुद्ध महादेव, हिमाचल में मणिमहेश त्रिपुरारि आदि वाली परम पवित्र डुग्गर धरती के समान ही यहाँ की भाषा डोगरी को भी मधुर भाषा कहा गया है । कवि ने मातृभाषा को एक अनमोल निधि कहा है जो पौरुष एवं राष्ट्र का संबल हुआ करती है । कवि की अन्तरात्मा की पुकार है कि मातृभाषा ही किसी जाति का मान-सम्मान होती है । राष्ट्र के जीवन में भाषा का वही स्थान है जो जीवन में प्राण का होता है । अतः जब किसी की मातृभाषा मिट जाये तो उसका अस्तित्व भी मिट जाता है । कवि रघुनाथ ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि डोगरी को उस समय यदि किसी से भय था तो वह पठित डोगरा समाज से ही था क्योंकि यही वर्ग स्वयं (उनके समय में) डोगरी को भूल-भुलाकर कहने लगा था कि डोगरी तो धूल में मिल गई है । कवि ने डोगरी को हिन्दी की छोटी बहन कहते हुए हिन्दी-डोगरी के आपसी थोड़े से अन्तर को स्पष्ट करने के लिये डोगरी-हिन्दी के लिये 'लंबी और कड़वी' शब्दों का कविता में प्रयोग करके समाज को समझाया है कि पहले पहली सीढ़ी अर्थात् मातृभाषा की सीढ़ी पर चढ़ना चाहिए । मातृभाषा को बच्चे बड़े सहज भाव से अपनी माँ से ही सीख लेते हैं । वस्तुतः दोनों सरलतया गले से उतर जाती है ।

रूढ़िवादिता का विरोध

रघुनाथ सिंह ने जब कविता लिखना प्रारम्भ किया था उस समय भी डोगरा लोगों में अनेक अन्धविश्वास प्रचलित थे । रूढ़िवादिता के शिकार बने हुए डोगरा लोगों को आगे बढ़ने की प्रेरणा देने के हेतु कवि ने 'खो' (आदत) कविता लिखी जिसके द्वारा डोगरों की रूढ़िगत आदतों पर खूब व्यंग्य कसा गया है । इस कविता के माध्यम से कवि ने डोगरा जाति को, विशेषतया पठित लोगों (पढ़े दे बाबुओं) को आगे बढ़कर समय की पुकार को समझने और उसके

विषय में 'हाँ' अथवा 'न' शब्दों में अर्थात् स्पष्ट दृष्टिकोण अपनाने और प्रस्तुत करने का परामर्श दिया है । समूची कविता में एक ही भाव का अर्थात् डोगरों के पिछड़े होने का और बुद्धिमान जातियों एवं राष्ट्रों का समय की तेज़ दौड़ से आगे निकल जाने का आवाहन किया गया है । डोगरा लोगों को व्यर्थ के अन्धविश्वासों में पड़ना जैसे अमुक मास (माघ) शुभ और अमुक (पौष) अशुभ है, लोहे की साँकलें लेकर कल्पित देवता के सम्मुख अपनी पीठ पर मारना और आशा करना कि इससे भूत-प्रेत भाग जायेंगे आदि अहितकर रूढ़ियों को त्याग देने एवं अपने ही हरिजन भाइयों से छुआछूत छोड़ देने की ज़ोरदार अपील की गयी है । उन्होंने कहा है कि यदि समय पर ऐसा नहीं किया गया तो डोगरा जाति हाथ मलती रह जायेंगी । 'खो' ही इनकी पहली कविता थी जो सन् 1947 में प्रकाशित हुई । इसकी कुछ पंक्तियाँ देखिये :-

"चिरै दी पेई दी डोगरें गी खो,
माघ सलक्खना चन्दरा पोहू ,
ढोल ते सौगला गवै दी सोहू
डैनीं ते भूतें दा इनेंगी मोहू ।"

अर्थात् डोगरों में यह अन्धविश्वास चिरकाल से चला आ रहा है कि 'माघ' मास तो शुभ होता है परन्तु 'पौष' अशुभ । अपने कल्पित देवों के सम्मुख ढोल बजा-बजाकर, लोहे की साँकलें उछाल कर डायन-भूतों को भगा देने का इन्हें अटूट विश्वास है । ये (बात-बातपर) गऊ की सौगन्ध उठाते है ।

इस कविता को डोगरी के लेखकों से बहुत अधिक सराहना प्राप्त हुई और इस प्रकार रघुनाथ सिंह एक कवि के रूप में पहचाने जाने लगे । यह वही समय था जब डोगरी साहित्य की जागरण बेला थी । डोगरी संस्था की स्थापना हो चुकी थी और कई नवयुवक कवि लोग डोगरी में अच्छी कविता कहने लगे थे । हिन्दी, उर्दू में लिखनेवाले कई डोगरा तरुण कवि अब डोगरी में लिखने लगे थे । सामन्तशाही के कट्टर उपासक एवं स्वभाव से अहंकारी ठा. रघुनाथ सिंह ने शुरू-शुरू में डोगरी

की उभरती हुई साहित्यिक धारा की कटु आलोचना की थी जिसके लिए उन्होंने अपने जीवन की संध्या-वेला में न केवल दुःख ही प्रकट किया अपितु डोगरी संस्था की उपलब्धियों की भूरि-भूरि प्रशंसा भी की । फलतः ठा. रघुनाथ सिंह भी इन्हीं कवियों की पंक्ति में जा बैठे । चौदह कविताओं के संकलन 'कवितारत्न' काव्य-संग्रह में ही इनका श्रीमदभगवद्गीता का डोगरी अनुवाद भी प्रकाशित है ।

काव्य-कला एवं सर्जना

ठा. साहब डोगरी के प्रख्यात एवं सशक्त कवि हुए हैं । कविता का श्री गणेश इन्होंने अपनी राजनीतिक विचाराभिव्यक्ति का साधन रूप मान कर किया, साध्य नहीं । कवि अथवा लेखक अपने समाज के सबसे अधिक सवेदनशील एवं सजग सदस्य होते हैं ओर वे जो कुछ कहते-लिखते हैं वह समाज का ही प्रतिबिम्ब होता है । राजसी परम्पराओं के प्रति अटूट आस्था एवं बदलते हुए युग के रंग-ढंग के प्रति अपने क्षोभ की अभिव्यक्ति करने के लिए कविता ठा. रघुनाथ सिंह का एक साधन बन गई । सन् 1947 ई. के राजनीतिक परिवर्तनों से असंतुष्ट इनका मन उन्हें राजनीति के क्षेत्र में ले तो आया परन्तु स्वाभिमानी एवं हठीले स्वभाव के कारण वे वहाँ अधिक देर तक न चल सके ।

कवि सम्याल भले ही लोगों के सामने बहुत बाद में प्रकट हुए पर उनके चोटी का कवि होने का प्रमाण जनता को मिल चुका था । रघुनाथ सिंह ने अपनी कविता में मातृ-भाषा डोगरी की महिमा गायी है । इन्होंने डोगरों में प्रचलित अन्धविश्वासो, नित-नूतन फैशन प्रवाह में स्वछन्द पदार्पण करनेवाले युवक-युवतियों पर अप्रसन्नता भी प्रकट की है । इसके अतिरिक्त प्रकृति-चित्रण, ईश्वर-महिमा आदि विषयों को भी इनकी लेखनी से सफल अभिव्यक्ति मिली है ।

सामान्तवाद का समर्थन

कवि सम्याल ने देश की स्वतन्त्रता पर कटु व्यंग्य कसते हुए 'भली आजादी' अर्थात् यह कैसी आज़ादी ! कविता लिखी, जिसमे बँटवारे के समय के उपद्रवो पर लिखते हुए वे कहते है कि तूफ़ान से पीछा की जाती हुई आग सहमी-जिह्वाएँ निकाले बढ़ती ही चली जा रही है । लूट-खसोट ऐसी मची है कि घर-मकान, झुग्गी-झोंपड़ी,

खेत-खलियान सब जलकर राख हो गये हैं । न तन पर कपड़ा रहा, न पेट भर खाना ही नसीब होता रहा । जो पशु-धन था, वह भी जाता रहा । ऐसी परिस्थितियों में बच्चे रोटी माँगते तो माँ हड़बड़ा कर घड़े में आग जलाने लगती और पिता स्नेह-ममता के स्थान पर डंडा दिखाकर बच्चों को चुप करा देता । इस प्रकार के बीहड़ मार्ग पर मानव अस्त-व्यस्त पड़ा था । इस पर उखड़े पाँव से भला कोई कैसे सँभल पाता ? प्रस्तुत है "भली अजादी" की कुछ पंक्तियाँ :-

"दादी भली अजादी आई,
आक्खै स्हाड़ा बुल्ली,
अग्गें अग्ग ते पिच्छै न्हेरी
आई सिरै पर झुल्ली ।
लुट्टे-पुट्टे मारे-कुट्टे
सड़े खलाड़ा कुल्ली,
डंगर-बच्छा किश निं बचेआ
खिन्ध-खन्धोला जुल्ली ।"

अर्थात् हमारा बालक बुल्ली कहता है दादी माँ यह अच्छी (व्यंग्य से) आज़ादी है ।
आगे अग्नि जल रही है और पीछे की ओर से आँधी ने आकर झकझोरा है ।
हम लूट लिये गये है, पिटे हुए हैं । हमारे झोंपड़े, हमारे खलियान जलकर राख हो गये हैं । माल-मवेशी लेफ-तलाइयाँ कुछ भी तो नहीं बचे ।

उपदेशात्मकता

कवि रघुनाथ सिंह ने पिछड़े हुए लोगों को सीख देने के लिए उपदेशात्मक काव्य-शैली अपनाई । जहां तक हृदय की सच्चाई, विचारों की गहराई और अनुभूति की तीव्रता का प्रश्न है वहां तक रघुनाथ सिंह सम्याल की कविता कुशल-अभिव्यक्ति-कला की कसौटी

पर खरी उतरती है, इसीलिये ठाकुर रघुनाथ सिंह को हम एक उत्तम कवि कह सकते हैं । भले ही उनकी कविता में उपदेशात्मकता का पुट अधिक प्रस्फुटित हुआ है ।

'इन्दे कोला छुड़को' (इनसे छुटकारा पाओ) कविता में कवि सम्याल ने डोगरा नवयुवकों एवं नवयुवतियों को पश्चिम की रंग-रलियों का अन्धाधुंध अनुकरण करने से रोका है । फैशनों से, असंयत- प्रेम- सम्बन्धों से छूटने का, डोगरा समाज को पुत्र-पुत्री में भेद-भावना रखने जैसी कुरीति से मुक्त रहने का और मृतकों की स्मृति में किये जानेवाले बरसी, चौबर्सी आदि श्राद्ध में ऋण उठाकर भी दिखावे के लिये शय्या-दान आदि से बचने का उपदेश दिया है । कवि ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ये पुराने रीति-रिवाज़ किसी समाज एवं जाति को कभी ऋण से उन्मुक्त नहीं होने देंगे । कवि ने मृतकों के स्थान पर जीवित मनुष्यों को पूजने की मन्त्रणा दी है । कवि के ही शब्दों में—

"मोयें-गें दी मढ़ी नि पूजो,
जीन्दे पितर मनाओ ।
बधो, फलो ते बस्सो-रस्सो,
चंगी रीत चलाओ ।
इस्से घरै च मोये बथ्हेरे, इस्से घरै च जम्मे ।
मत कुसै गी र'वै भलेखा, अन्दर पेदे लम्मे ।।

अर्थात् मृतकों की समाधियों की पूजा त्यागकर देहधारियों की सेवा तथा आदर-सत्कार करो । कुरीतियों को छोड़कर अच्छी परम्पराओं को जन्म दो जिससे कि तुम्हारा आदर मान बढ़ सके । उन्हीं घरों में अनेकों ने जन्म लिया और अनेक ही यहाँ से चलते भी बने । अयोध्यापति 'राम' नहीं रहे और न ही कालजयी रावण, जिसने काल को अपनी खाट से बाँध रखा था-मृत्यु से बच सका ।

रघुनाथ सिंह ने लोगों को स्वाध्याय एवं साहित्य-सृजन की ओर उदासीन पर व्यर्थ में समय गँवाते देखकर उन पर तीखे व्यंग्य बाण चलाते हुए उन्हें सृजनात्मक एवं संरचनात्मक काम

करने का परामर्श दिया है । उन्हीं के शब्दों में :

'कुन सोचै कुन लिखै कताबां, कौन मुसीबत झल्लै
कवि बचैरे चढ़न परेड़ै, मूर्ख खिचदे थल्लै ।
कविता- रत्न गली बिच रुलदा, बे-कदरें दे म्हल्लै
रंग, शक्ल, गुण परखन कियां, अकल निं जिंदे पल्लै' ।।

अर्थात् कौन सोचे और कौन पुस्तकें लिखने की मुसीबत उठाता रहे । कवि तो भविष्य की बात बता रहा है परन्तु मूर्ख उसका उपहास उड़ा रहे हैं । यह कविता-रत्न अयोग्य जनों के मुहल्ले में बिक रहा है । वे भला इसका क्या साहित्यिक-मूल्य निर्धारित करेंगे जिनकी अपनी बुद्धि भ्रमित हो चुकी है । रघुनाथ सिंह का उक्त कवितांश हिन्दी के कविवर बिहारी के उस दोहे का स्मरण कराता है जिसमें कवि ने हाथी आदि बहुमूल्य वस्तु के कुस्थान पर विक्रय हेतु पहुँच जाने की बात कही है ।

मैहुमा (महिमा) कविता में ठाकुर रघुनाथ सिंह ने प्रश्न-शैली के माध्यम से उस परमपिता परमेश्वर में अटूट श्रद्धा दिखाई है । कवि का कहना है कि उस प्रभु ने अथाह सागरों में मोती भर दिये, कानों को हीरे प्रदान किये, उस परमात्मा ने वनों में दहाड़ने वाले सिंह, रणभूमि में गम्भीर नाद करने वाले योद्धाओं को जन्म दिया है । कवि के अनुसार महात्मा चाणक्य, शंकराचार्य, नानक, वीर बैरागी, तुलसीदास, सूरदास और संत कबीर भगवान का ही रूप थे । ऊँचे पर्वत, अगाध सागर रचने वाला, राजा को रंक और रंक को राजा बनानेवाला भी वही प्रभु है । वह जब कृपालु होता है तो व्यक्ति मान-धन की चरम सीमा पर पहुँच जाता है । यह सब भगवान की ही लीला है कि वह जब चाहे किसी को झट से उन्नति के शिखर पर चढ़ा देता है और जब चाहे नीचे भी गिरा देता है ।

ठा. रघुनाथ सिंह ने संसार को भवसागर कहा है जिसे पार करना किसी प्रकार भी सहज और सरल नहीं है । वस्तुत : मानव-मन ही व्यक्ति को उभारता और पार उतारता है और वही उसकी जीवन-नौका को किनारे लगाता है । इसलिये अपने मन के हारने

में ही हार और जीतने में जीत है । कवि के शब्दों में :-

औखा तरना मित्तरो, भवसागर संसार ।
मन गै बेड़ी रोढ़दा, मन गै लांदा पार ।।
मन दियां खेढां सारियां, सोचो बारम्बार ।
मन दे जीते जीत ऐ, मन दे हारे हार ।।

अर्थात् हे मित्रो ! संसार रूपी भवसागर को तैरना अति कठिन है । मन ही जीवन रूपी नाव डुबोनेवाला है और मन ही पार उतारनेवाला है । मन की ही विभिन्न लीलाएँ हैं । इन्हीं का पुनः पुनः चिन्तन करो । मन को जीतने में ही जीत है और मन के हारने में ही हार है ।

रघुनाथ सिंह की बहुत-सी कविताएँ अप्रकाशित पड़ी हैं, जिनमें से 'लाडप्यार चंगे', 'तन्हाई', 'जवाहरलाल', 'भारत-रत्न' आदि एक डायरी में कहानियों के साथ रखी गयी हैं ।

कवि रघुनाथ सिंह को उर्दू , फ़ारसी, पंजाबी, हिन्दी आदि भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था । इन भाषाओं में उनकी रची हुई कुछ कविताएँ परिशिष्ट के अन्तर्गत दी गयी हैं । प्रस्तुत है उनकी एक कुण्डलिया कविता, जिसे नरसिंह दास 'नर्गिस' ने 'कवित्त' कहा है :-

ओट लीजिये बड़े की, चोट पड़े नां कोय ।
फोट-खोट ब्यापे नहि लोट-पोट नहिं होय ।।
लोट-पोट नहिं होय हार कर बैरी भागे ।
बेल-वृक्ष के संग पवन का दाओ नां लागे ।।
भाई भभीषण सम्पती, राजमान गढ़ कोट ।
डंक बजाए लंक में लेई राम की ओट ।।

कुण्डलिया हिन्दी का एक प्रमुख छन्द है । डोगरी में कवि रघुनाथ सिंह से पहले किशन स्मैलपुरी ने कविता की कुण्डलिया विधा का श्रीगणेश किया था । प्रस्तुत कुण्डलिया में बड़े व्यक्तियों का आश्रय पाने की महत्ता को उदाहरणों द्वारा समझाया गया है । कवि का कथन है कि बड़ों का सहारा लेनेवाले को कोई कष्ट नहीं पहुँचता, न ही ऐसे व्यक्ति की किसी से फूट पड़ती है, न ही उसे कोई धोखा

दे सकता है और न ही वह भटकता ही है । उसके सामने शत्रु टिकने का दुस्साहस नहीं कर सकता । जिस प्रकार वृक्ष के सहारे रहनेवाली लता पर वायु का प्रकोप-चक्र नहीं चल सकता, उसी प्रकार विभीषण ने भी राम की शरण में जाकर धन-सम्पत्ति, राज्य-सुख और आदर-मान पाकर लंका के क़िले-परकोटे में जाकर डंका बजा दिया । कवि ने अमर शहीद डोगरा जनरल ब्रिगेडियर राजेन्द्र सिंह के कबायली हमले में, पाँच-दिनों की वीरतापूर्ण लड़ाई में, शहीद हो जाने की घटना पर शाह मुहम्मद की टेक पर पंजाबी में भी एक कविता लिखी है । जो इस प्रकार है :-

जिदी जिंद ते बिंद ना पंच्छ लग्गा ।
ओन्नूं खबर की तेगियां-तोड़ेयां दी ।।
मोये खोत्तिआं दे हार भार-थल्ले ।
उन्हां सार की राखियां घोड़ियां दी ।।
सुत्ते रैहुन कुरबानियां देन बेल्ले ।
मंद्दी खो नखटटुआं कोढ़िआं दी ।।
रघुनाथ सिंह जी खान दा वक्त आवे,
गल्ल छेड़ दिदे मतेआं थोड़ेआं दी ।।

अर्थात् जिनकी देह पर तनिक भी खराश न आई हो, उन्हें तेग़ों-भालों का एहसास ही कैसे हो सकता है ? (युद्ध में) हार कर गधों के बोझ तले मरनेवालों को पालतू घोड़े की क्या समझ हो सकती है ? रघुनाथ सिंह जी कहते हैं कि खाने-पीने के समय थोड़ा- ज़्यादा का झगड़ा छेड़नेवाले निखट्टू दरिन्दों की आदत बहुत बुरी है ।

इस प्रकार, इन्होंने लोगों में स्वाभिमान एवं आत्मचेतना का भाव पैदा किया । ठा. रघुनाथ सिंह ने डोगरी के अतिरिक्त पंजाबी, उर्दू और हिन्दी मे भी कई कविताएँ और कहानियाँ लिखी है जो लेखिका को उनके सपुत्र ठा. गोबिन्द सिंह एवं पौत्र ठा. मनुराय सिंह से मिलीं ।

डोगरी कविता की नवीनधारा के बीच ठा. सम्याल की वाणी का सबसे ऊँचा स्वर देश-भक्ति का था । कवि ने देश-प्रेम की तो

खूब बात की है, परन्तु स्त्री-पुरुष के प्रेम-विषयक उनकी कविताएँ नहीं मिलती।संभवत :इसलिए कि कविता को उन्होने 'स्वान्त :सुखाय' नहीं माना 'परहिताय ' माना अर्थात् अपने डोगरा लोगों को पिछड़ेपन से बाहर निकाल कर समय की गति के संग चलने के लिये प्रेरित करने के हेतु कविता को माध्यम बनाया ।

ठा. रघुनाथ सिंह का कविता- लेखन जितना सशक्त था उतना ही परिपक्व उनका गद्य-लेखन भी था । उन्होंने सैकड़ों लघु कथाएँ और लेख भी लिखे हैं जो पाण्डुलिपियों के रूप में पड़े हैं । उनकी गद्य-शैली का एक उदाहरण प्रस्तुत है :-

> "गीता दा विशे बड़ा डूंग्धा, संस्कृत जबान बड़ी कठन ते डोगरी बोली बदेसी बोलियें दी लताड़ी दी ते मेरे कोल विद्या-धन दा बड़ा घाटा-इन्नियां कमजोरियां हुन्दे होई भी भगवान दी अपार कृपा कन्नै में गीता दा अनुवाद करने दा मुशकल कम्म शुरू करी दिता "।

अर्थात्—गीता का विषय बड़ा गहन, संस्कृत भाषा बड़ी किलष्ट एवं डोगरी बोली विदेशी बोलियों द्वारा दबायी गयी और मेरे पास विद्या-धन का नितान्त अभाव है । इतने सारे अभावों के होते हुए भी भगवान की अपार कृपा से मैंने गीता अनुवाद करने का दुष्कर कार्य आरम्भ कर दिया है ।

उनकी अप्रकाशित 'भूत' कहानी से उद्धृत गद्य का एक और नमूना देखिये-

> "बुड्ढा कमजोर (हा) दस्स बारां क्रोहु दा पैंडा (हा पर) जनानी ने तंग कीता । बुछकड़ू चुक्केआ ते मंघे दे कच्छ मैहरे आया । मंघेआ यार, जनानी खलासी नेई छोड़ै-तूं जा एहु गुड़ लाजो गी पुजाई आ । अज्जै दी रात फसल- बूहटे दी राखी मेरे जुम्मे रेही । तेरे औन्दे धोडी अउं इस कुल्ली च रौंहुग । पिंडा दे कमीन बेचारे ने गुड़ चुक्केआ ते टुरी पेआ । सौन ओहुदी कुल्ली च बैठा ते सोचेआ इक दिन च किन्ना नुकसान होन लगा । हुक्का सरैहुने रक्खेआ ते लगा गुड़गुड़ान ।"

> अर्थात् बूढ़ा दुर्बल था और दस-बारह कोस का सफ़र था । उसकी पत्नी ने (जाने के लिए) विवश किया तो उसने गठरी उठाई और मंघा (व्यक्ति नाम) के पास मेहरा (स्थान नाम) जा पहुँचा (और कहने लगा) मंघे मित्र, पत्नी पीछा नहीं छोड़ रही (और) बोझ उठाकर जाना (मेरे लिए) कठिन है । इसलिए तुम जाओ और गुड़ लाजो को दे आओ । आज की रात खेतों की रखवाली की ज़िम्मेदारी मेरी । तुम्हारे लौटने तक मैं इस कुटिया में पड़ा रहूँगा । मंघा गाँव का मजदूर था । बेचारा गुड़ उठाकर चल पड़ा । सौन उसकी कुटिया में बैठा-बैठा यह सोचकर कि एक दिन में भला कितनी-सी हानि हो जायेगी (लेट गया और) सिरहाने हुक्का रखकर गुड़गुड़ाने लगा ।

भाषा - शैली

रघुनाथसिंह की भाषा टकसाली डोगरी थी जिसमें ठेठ डोगरी मुहावरे जैसे—भखे दे तवे पर मक्खन टकाना, (गर्म तवे पर मक्खन रखना) तलियां मलना (हाथ मसलना), अम्बर फटना, (हाहाकार मचना) शामत आना, ढेरियाँ ढाना (हतप्रभ हो जाना), घनघोर पड़ना आदि का सुन्दर प्रयोग है ।

इनकी भाषा की समृद्धि का उल्लेख करते हुए डोगरी के प्रसिद्ध ग़ज़लगो शायर एवं प्रसिद्ध पत्रकार वेदपाल दीप ने अपने एक लेख (आजादी बाद दी डोगरी कविता) में कविता क्षेत्र में पदार्पण करनेवाले नवयुवकों से कहा है—

> "सम्याल हुन्दी विचारधारा ते दृष्टिकोण कन्नै मतभेद भाएं जिन्ना मर्जी करी लेओ, बो नमें जुगै दी क्रान्ति दी हवाएं च उस्सरने आले नमीं पीढ़ी दे कवियें लेई एहु मशवरा बड़ा कारी दा होग, जेकर उने कविता दा बपार करना ऐ ता ओहु भाशा, ठेठ मुहावरा, उपमा, रूपक, छन्द, कटाख ते कविता दी रचना च कम्म औने आला सारा सौदा-सुल्फ सम्याल हुन्दे कोला दुहारा लेइयै अपनी हट्टी खोल्लन ।"

अर्थात् सम्याल की विचारधारा एवं दृष्टिकोण से जितना चाहो मतभेद कर लो, परन्तु नये युग की क्रन्तिकारी हवाओं में उगनेवाली नयी पीढ़ी के कवियों के लिये यह सलाह बड़ी लाभकारी होगी कि यदि वे काव्य-व्यापार करना चाहें तो उन्हें चाहिये कि वे भाषा, ठेठ मुहावरा, उपमा, रूपक, छन्द, कटाक्ष एवं काव्य-रचना में काम आनेवाला अन्य सारा सामान सम्याल जी से उधार लेकर अपनी दुकान (कविता की दुकान) खोलें ।

गीता-अनुवादक के रूप में

डोगरी साहित्य के भंडार में मौलिक कृतियों के साथ-साथ अनूदित रचनाओं का भी उल्लेखनीय स्थान है । लगभग सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं, संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओं एवं कुछ विदेशी भाषाओं की श्रेष्ठ पुस्तकों के भी उत्तम डोगरी-अनुवाद हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करते आये हैं । संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, बाङ्ला, पंजाबी, कश्मीरी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं की उत्तम रचनाएँ अनूदित होने पर डोगरी के पाठकों के ज्ञान में वृद्धि करती आयी हैं । इन अनुवादों में यूँ तो इतिहास, पुराण उपनिषद् आदि पुस्तकें भी सम्मिलित हैं, पर श्रीमद्भगवद्गीता ही एक ऐसी पुस्तक है जिसके डोगरी में बहुत सारे अनुवाद हुए हैं और प्रत्येक अनुवाद अपनी-अपनी विशेषता लिये हुए हैं । श्रीमद्भगवद्गीता के एकाधिक अनुवाद उपलब्ध होने का एक कारण तो डोगरा लोगों की धर्म-शास्त्रों में गूढ़ आस्था रखना भी हो सकता है, पर मूलतः गीता के सर्वहिताय अमर सन्देश की व्यापकता ही प्रमुख कारण रहा है—ऐसा प्रतीत होता है । विषय की एकता के होते हुए भी प्रत्येक अनुवाद में विविधता है जिस पर अनुवादकों की अपनी-अपनी छाप झलकती है ।

ठा. रघुनाथ सिंह की डोगरी साहित्य को सबसे बड़ी देन उनका किया हुआ गीता-अनुवाद है, जिसे वे बड़े रोचक ढंग से पढ़कर सुनाया करते थे । यह 1954 ई. को विजय प्रेस, जम्मू से प्रकाशित हुआ । इसकी भूमिका एवं मुखपृष्ठ की छपाई दीवान प्रेस जम्मू में हुई । डिमाई आकार की यह अनूदित कृति 208 पृष्ठों में है । उससे पूर्व सन् 1934 में प्रोफ़ेसर गौरीशंकर का गीता का गद्य-अनुवाद—जो शब्दानुवाद-पद्धति में किया गया था—छप चुका था । ठाकुर साहब का यह गीता-अनुवाद उस दृष्टि से डोगरी में गीता का दूसरा अनुवाद था जो पाठकों को मिला परन्तु क्योंकि

यह मूल पद्य से पद्य में किया गया अनुवाद था—इस दृष्टि से इसका स्थान प्रथम पद्यानुवाद का है ।

रघुनाथ सिंह ने गीता का यह डोगरी अनुवाद वस्तुतः फ़ारसी लिपि में किया था जिसका देवनागरी में लिप्यंतरण गाँव कली (तहसील साम्बा) के पंडित भगीरथ पाधा ने किया और छपाई के समय प्रूफ़रीडिंग का काम भी भगीरथ पाधा ने ही किया था । सम्याल के गीता-अनुवाद की भाषा सरल एवं सुगम है पर हिन्दी के बहुत से शब्दों के डोगरी में प्रयोग कभी-कभी अखरने लगते हैं । प्रस्तुत अनुवाद वार्तालाप शैली में किया गया है जिससे कभी-कभी मूलार्थ का भाव स्पष्ट नहीं हो पाता ।

गीता के डोगरी अनुवादों को अनुवाद-प्रकार की दृष्टि से देखा जाए तो ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल का गीता-अनुवाद पद्य-अनुवाद की श्रेणी में रखा जाता है । गीता का मूल रूप पद्यात्मक होते हुए भी डोगरी में इसके गद्य एवं पद्य दोनों ही रूपों में अच्छे अनुवादों का मिलना इस बात की पुष्टि करता है कि अनुवादक के लिये ऐसा कोई बंधन नहीं होता कि वह पद्य का पद्य ही मे और गद्य का गद्य में ही अनुवाद करे ।

अनुवाद के स्वभाव के आधार पर अनुवाद के कई भेद-उपभेद जैसे शब्द-प्रतिशब्द-अनुवाद, भाव-अनुवाद, छाया-अनुवाद, सार-अनुवाद, रूपान्तरण, व्याख्या-अनुवाद आदि माने गये हैं । लगभग इन सभी में गीता के डोगरी अनुवाद मिलते हैं । ठाकुर रघुनाथ सिंह के गीता-अनुवाद का झुकाव भावानुवाद की ओर है । इसका कारण इस अनुवाद का पद्य में होना है । वस्तुतः कविता के अनुवाद के विषय में ही कुछ लोगों को संदेह है और गीता जैसे बहु-अर्थी पाठ को ठीक से कविता-शैली में ही अनूदित करना हो तो और भी दुष्कर है । इसमें सन्देह नहीं कि काव्यानुवाद कठिन साधना का काम है पर ऐसा भी नहीं कि अच्छा काव्यानुवाद हो ही नहीं सकता । साहित्य के कई उत्तम काव्य-ग्रन्थों के सुन्दर पद्यात्मक एवं गद्यात्मक अनुवाद दूसरी भाषाओं में हुए हैं ।

गीता के ही डोगरी में भी ग्यारह अनुवाद हो चुके हैं । रघुनाथ सिंह के अतिरिक्त परशुराम नागर एवं प्रो. लक्ष्मीनारायण ने भी गीता के पद्य-अनुवाद किये हैं ।

ठाकुर रघुनाथ सिंह प्रतिभाशाली कवि तो थे ही और जीवन के संध्या काल में, विशेषकर के कारावास में, जहाँ शान्त एकान्त वातावरण था, बैठकर किया गया उनका श्रीमद्भगवद्गीता का डोगरी-अनुवाद बड़ा सुन्दर है । गीता के श्लोकों के सूक्ष्म अर्थों का भाव डोगरी में सरल एवं सहज रूप में स्पष्ट किया गया है ।

श्रीमद्भगवद्गीता का डोगरी-अनुवाद करने के कारण रघुनाथ सिंह की गणना डुग्गर के उल्लेखनीय योद्धाओं के साथ एवं विश्व के चोटी के लेखकों की श्रेणी में की गई है । पं. प्रेमनाथ डोगरा के शब्दों में ,

> "डोगरा धरती गी शूरवीरें ते सूरमें दी धरती आखदे न । अज्ज बी यूरप, अफ्रीका, बगदाद,मेसोपोटमिया ब्रहुमा, मलाया, चीन, जापान ते होर कई देसे दियां धरतियां इन्दी वीरता दी गवाहियाँ देने गी त्यार न । डुग्गर देसै दा मुदब्बर ते ब्हादुर जर्नैल जेहुदा नां अज्ज बी गिलगित्त ते लदाखै दे उच्चे पर्वत ते उन्दे पैर पेई दियां गुलाबी बरफां घोखे र दियां न, ओहु स्वर्गीय महाराजा गुलाबसिंह न जिन्हें रियासत जम्मू-काश्मीर दियां गै नेई भारतवर्ष दियां हद्धां चीन, रूस ते काबल कन्नै मिलाई दित्तियां ते देसै दा नां उजागर कीता । अज्ज उन्दी आत्मा गी जित्थे वजीर जोरावर सिंह,जर्नैल हुशियारा, बाज सिंह ते राजेन्द्र सिंह दे कारनामें सुख देआ करदे होइ.न उत्थै डोगरे देसै दे रणवीर सिंह जैसे विद्या-प्रचारक राजा भोज, पं. गोकुल चन्द, गंगाधर जैसे कालिदास, बैताल, दत्त कवि ते होर कई अज्ञात महारथियें दियां कृतियां ठण्ड पा करा दियां न । उस्सै पंक्ति च अज्ज ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल होरें अपना नां जोड़ियै डोगरे देसै दे इतिहासै गी होर उज्जवल करी दित्ता ऐ । इस गीता दी अमर कृति कन्नै हुन्दा नां भी अमर होई गेआ ऐ।"

—अर्थात् डोगरा धरती को शूरवीर एवं योद्धाओं की धरती कहा जाता है । आज भी योरोप, अफ्रीका, बगदाद, मैसापोटेमिया, ब्रहुमा, मलाया, चीन, जापान और अन्य कई देशों की धरती

इनकी वीरता की साक्षी है । डोगरा देश का मुदब्बर और बहादुर जनरल जिसके नाम की चर्चा आज भी गिलगित्त एवं लदाख के ऊँचे पर्वतों और उन पर पड़ी हुई गुलाबी बरफ़ पर हो रही है । उसका सम्बन्ध स्वर्गीय महाराजा गुलाब सिंह से है जिन्होंने न केवल जम्मू-कश्मीर राज्य की ही अपितु भारतवर्ष की सीमाएँ चीन, रूस एवं काबुल से मिला दी एवं देश का नाम उजागर किया था । आज उनकी आत्मा को जहाँ वज़ीर जोरावरसिंह, जनरल हुशियारा, बाजसिंह और राजेन्द्रसिंह के कारनामे आह्लादित करते होंगे वहाँ डोगरा देश के रणवीरसिंह सदृश विद्या प्रचारक, राजा भोज, पं. गोकुल चन्द्र, गंगाधर, कालिदास, दत्त जैसे कवि और अन्य कई अज्ञात महारथियों की कृतियाँ सुख बाँट रही हैं । उसी पंक्ति में आज ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल जी ने गीता जोड़कर डोगरा देश के इतिहास को और उज्ज्वल बना दिया है । गीता की इस अमर कृति से ठाकुर साहब का नाम भी अमर हो गया है ।

रघुनाथ सिंह सम्याल के कथनानुसार गीता का डोगरी-अनुवाद इन्होंने अपने जीवन के अड़सठवें वर्ष में प्रारम्भ किया । उन्हीं के शब्दों में,

> "भगवान दी मरजी चौत्री साल नौकरी ते अठाट (68) साल दी उमर अराम करने बेलै देश-प्रेम दे जुल्म बिच हकूमत ने मिकी जेल- खान्ने ठोकी दित्ता ते डोगरी गीता-अनुवाद दी बुनियाद रखोई ।"

—अर्थात् भगवान की कृपा से चौंतीस वर्ष की सेवा-वृत्ति के उपरान्त अड़सठ (68) वर्ष की आयु और विश्राम के समय देशप्रेम के अपराध में सरकार द्वारा मुझे कारावास में ठूँस दिया गया और डोगरी गीता-अनुवाद की नींव रखी जा सकी ।

इस अनुवाद में संस्कृत के मूल श्लोक नहीं दिये गये । प्रत्येक अध्याय के श्लोक की अंक-संख्या दी गई है । प्रतीत होता है कि अनुवादक ने पुस्तक की छपाई पर होनेवाले व्यय की बचत के लिये कलेवर को छोटा रखने के लिये ऐसा किया है । अनुवादक सम्याल

संस्कृत तो जानते नहीं थे, अतः गीता के किसी हिन्दी अनुवाद से डोगरी में अनुवाद किया गया लगता है । भले ही इसमें उसका कोई उल्लेख नहीं मिलता । निस्सन्देह इसमें भाषा से सम्बन्धित कुछ दोषों की ओर संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् एवं भाषा शास्त्री डा. सिद्धेश्वर वर्मा ने भी सकेत किया है ।

गीता के डोगरी अनुवाद का मूल उदेश्य मरणासन्न, परन्तु संस्कृत से अनभिज्ञ, डोगरा लोगों को गीता का अर्थ ठीक से समझाने के लिये किया गया बताया गया है । ठाकुर साहब के ही शब्दों में -

> "मरन शेज पर पेदे डोगरें दे सरैहुने संस्कृत गीता दा पाठ करने दा रिवाज अज्ज तोड़ी चला करदा ऐ । जिस बोल्ली गी बड़े-बड़े विद्वान पण्डित मुश्कल समझदे न, अनपढ़ डोगरा अन्त समय उसी केह्नू समझदा होग, पता नेई एह्नू हालत किच्चर तोड़ी रौंहदी " ।

—"मृत्यु शय्या पर पड़े हुये डोगरा व्यक्ति के सिरहाने संस्कृत गीता का पाठ करने की प्रथा आज तक चली आ रही है, जिस बोली (भाषा) को बड़े-बड़े विद्वान पंडित कठिनाई से समझते हैं, अनपढ़ डोगरा (जीवन) अन्त समय में उसे क्या समझता होगा । न जाने यह दशा कब तक बनी रहेगी ?"

श्रीमद्भगवद्गीता का यह डोगरी पद्य-अनुवाद किस श्रेणी में रखा जा सकता है, इस पर विचार करने के लिये मूल भगवद्गीता के प्रत्येक अध्याय से एक-एक प्रतिनिधि श्लोक को लेकर उसका डोगरी अनुवाद भी साथ दिया गया है । इस प्रकार अठारह अध्यायों में से उन अठारह श्लोकों को लेकर उनके डोगरी अनुवाद का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है, जिनसे 'अष्टादशी' गीता बनती है । शास्त्रानुसार अष्टादशी-गीता के अध्ययन से भी उतना ही माहातम्य मिलता कहा गया है जितना सम्पूर्ण भगवद्गीता के पढ़ने से मिलता है । इन श्लोकों की क्रमसंख्या इस प्रकार है— पहले अध्याय का 31 वाँ श्लोक, दूसरे का 48वाँ, तीसरे का 6ठा, चौथे का 39वाँ पाँचवें का 28वाँ, छठे का सतरहवाँ, सातवें का 14वाँ,

आठवें का 24 वाँ, नवें का30वाँ, दसवें का 10वाँ ग्यारहवें का 55वाँ, बारहवें का 22वाँ, तेरहवें का दूसरा, चौदहवें का 26 वाँ, पन्द्रहवें का 5वाँ, सोलहवें का 23वाँ, सत्रहवें का सोलहवाँ एवं अठारहवें का 66वाँ । इन श्लोकों के विवेचनीय शब्दों को रेखांकित कर दिया गया है और उन पर जो संख्याबोधक अंक लगाये गए हैं वे ही अंक उन शब्दों के डोगरी पर्यायों पर ही लगाये गए हैं, जिनसे पाठक को अनुवाद शैली की ठीक से पहचान हो सके ।

निमित्तानि[1] च पश्यामि विपरीतानि[2] केशव ।
न च श्रेयो[3]ऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे[4] ।।
(मूल श्लोक 31, अध्याय पैहला)

मिगी कृष्ण जी [2]खरे नी लबदे जीत, राज सुख भोग ।
भाई [4]बन्द गुरु मारी जीना सब बेअरथा[3] होग ।।
(डोगरी-अनुवाद)

योगस्थ[1] : कुरु कर्माणि सङ्[2]गं त्यक्त्वा धनंञ्जय ।
सिद्धय्सिद्धयोः समो भूत्वासमत्वं योग उच्यते ।।
(मूल श्लोक 48, अध्याय 2)

बिगड़ी बनी बराबर[3] समझी कर्म अर्जना करदा जा ।
समता[2] सिड़का बनी दी सिद्धि योग सहारे[1] चलदा जा ।।
(डोगरी-अनुवाद)

कर्मेन्द्रियानि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा[1] मिथ्याचारः[2] स उच्यते ।।
(अध्याय 3, श्लोक 6)

इंद्रियें गी रोकी अर्जन भोग मनै बिच्च धारी ।
हठ करदे जो विरथा[1] मूर्ख दम्भी, मित्थयाचारी[2] ।।
श्रद्धावांल्लभते[1] ज्ञानं तत्पर : संयतेन्द्रिय[2] : ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति[3] ।।
(अध्याय 4, श्लोक 39)

गुरु वाक[1] पर निश्चा जिसदा ब्रहुमवृति जो धीर ।
अहं ब्रहुम दा भेंत समझदा जित्तइन्द्रि[2] गम्भीर ।।
(डोगरी-अनुवाद)

यतेन्द्रिय मनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायण[1]: ।
विगतेच्छाभयक्रोधो[2] यः सदा मुक्त एव स : ।।
(अध्याय 5, श्लोक 28)

इंद्रियां मन बुद्धी जीतै आसा[1] त्रृशना रोहू ।
भय जिदै नेई[2] आवै नेड़ै, सदा मुक्त गै ओहू ।।
(डोगरी-अनुवाद)

युक्ताहारविहारस्य[1] युक्तचेष्टस्य[2] कर्मसु ।
युक्तस्वप्नाव्बोधस्य योगे भवति दु:[1]खहा ।।
(अध्याय 6श्लोक 17)

खाना, पीना[1], सौना, बौहना अर्जन-अहार[2]-बिहारे ।
योग सिद्ध एहू हुन्दा उसदा जेदे पथार्थ सारे ।।
(डोगरी-अनुवाद)

दैवी[1] हुयेषा गुणमयी[2] मम माया दुरत्यया[3] ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ।।
(अध्याय 7, श्लोक 14)

त्रै गुण[2] युगत नदी एह [1]माया भामें कठन महान[2] ।
मिगी निरन्तर भजन भक्त जो तरी सुखल्ले जान ।।
(डोगरी-अनुवाद)

अग्निर्ज्योतिरह : शुक्ल : षण्मासा उत्तरायणम् ।
तत्र[1] प्रयाता गच्छन्ति ब्रहुम ब्रहुमविदो[2] जना : ।।
(अध्याय 8, श्लोक 24)

अग्नि, जोत, दिन, पक्ख चानना, मार्तण्ड उतारएन ।
देह[1]छोड़ी सब ब्रहुम लोक गी जन्दे ब्रहुम-प्रापन[2] ।।
(डोगरी-अनुवाद)

अपि चेत्सुदुराचारो[1] भजते मामनन्यभाक्[2] ।
साधुरेव[3] स मन्तव्य : सम्यग्व्यवसितो हि स : ।।
(अध्याय 9, श्लोक 30)

दुराचारी[1] भी जेकर कोई सिमरन[2] करदा मेरा ।
साधू भगत[3] जगत विच्च जानो न हेरा न फेरा ।।
(डोगरी-अनुवाद)

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्[1] ।
असंमूढः[2] : स मर्त्येषु सर्वपापै : प्रमुच्यते ।।
(अध्याय 10 श्लोक 3)

अज, अनादि जगदीश[1], अजन्मा जानी नितानित्य ।
पाप, ताप थीं पाहुन खलास्सी ऐसे निर्मलचित्त[2] ।।
(डोगरी-अनुवाद)

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्त : सङ्गवर्जितः ।
निर्वैरः[2] सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ।।
(अध्याय 11, श्लोक 55)

मेरे कितै सब किश करदा जो भगती-पथ गामी ।
मिकी प्राप्त हुन्दा अर्जुन समदर्शी[2] निष्काम्मी[1] ।।
(डोगरी-अनुवाद)

श्रेयो[1] हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते[2] ।
ध्यानात् कर्मफलस्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्[3] ।।
(अध्याय 12, श्लोक 12)

कष्ट-साथ अभ्यासै कोला गुरु-मुख सुनेआं ज्ञान खरा[1] ।
सुने सुनाये ज्ञान कछा भी मेरा करना ध्यान खरा[2] ।।

ध्यान्नै थीं भी त्याग सरस पर ईश्वर अर्थ विचारे ।
त्याग कर्म फल पकड़ मुक्ती[3] सुख छोड़ कज़िये सारे ।।
(डोगरी-अनुवाद)

क्षेत्रज्ञ[1] चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ।।
(अध्याय 13, श्लोक 2)

सब्ब क्षेत्रें बिच मिगी गै क्षेत्रज्ञ[1] बी जान ।
इन्हें दउं दा ज्ञान अर्जना सच्चा समझ ज्ञान ।।
(डोगरी-अनुवाद)

मां च योऽव्यभिचारेण[1] भक्तियोगेन सेवते ।
स गुणान्समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते ।।
(अध्याय 14, श्लोक 26)

द्रिढ़ भगती दे कन्नें, पर जो मिगी भजै मन लाई ।
त्रै गुण दुस्तर सागर टप्पी मिलें[2] ब्रह्म बिच जाई ।।
(डोगरी-अनुवाद)

निर्मणिमोहा[1] जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
[2]द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्यय[3] तत् ।।
(अध्याय 15, श्लोक 5)

सुख दुख द्वन्द्व[2] मुगत वैरागी तजी काम[1] मोह् मान[1] ।
अज्ञान रहित जो आतम-ज्ञानी ब्रह्म परम[3] पद-पाहुन ।
(डोगरी-अनुवाद)

यः [1]शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते [3] कामकारतः[2] ।
न सः सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परांगतिम् ।।
(अध्याय 16,श्लोक 23)

रस्ता छोड़ी[1] चलै[3] कुरस्तै पुरुष इच्छयाचारी[2] ।
नां सिद्धि नां पर्मगती दा नां सुख दा अधिकारी ।।
(डोगरी-अनुवाद)

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः[1] ।
[2]भावसंशुद्धिरित्येतत् तपो मानसमुच्यते ।।
(अध्याय 17, श्लोक, 16)

कोमल मन परसन्न मौन[1]-चित्त हिरदै शुद्ध[2] विचार ।
मानस तप एहु समझ अर्जना भगवन चिंतन सार ।।
(डोगरी-अनुवाद)

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं [1]शरण' व्रज ।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा[2] शुचः ।।
(अध्याय 18, श्लोक 66)

सारे धर्म त्यागी अर्जुन ! ब्रह्म ज्ञान दी लोई ।
मेरी शरण होआ दा जेकर चलगा छैल धरोई ।।

जन्म मरन दुख जरा ब्याधी पाप ताप मलधोई ।
मुक्ती देङ् फिकर[2] नि करेआं जाग खलास्सी होंई ।।
(डोगरी-अनुवाद)

रघुनाथ सिंह सम्याल ने यहाँ अनुवाद की स्पष्टीकरण पद्धति को अपनाया है जिसमें अनुवादक को छूट होती है कि वह मूल पाठ के संक्षिप्त एवं संकेतात्मक शब्दों - वाक्यों को स्पष्ट करने के लिये अपनी और से कुछ जोड़ भी सकता है एवं लक्ष्यभाषा के स्वभावानुसार वाक्य-संरचना में कुछ अदल-बदल भी कर सकता हैं । दूसरी बात यह भी है कि मूल पद्य-पाठ का पद्य में अनुवाद करने के कारण भी इस अनुवाद में कुछ अधिक बातें आ गई हैं । जैसे प्रथम दो श्लोकों को ही लीजिये । सम्याल द्वारा निमित्तानि "शब्द का डोगरी में किया गया "जीतराज सुख भोग" अनुवाद पूर्णतया भावानुवाद है, पर संदर्भानुसार अर्थ देनेवाला है । ठाकुर साहब द्वारा संस्कृत शब्द श्रेयो के लिये 'बे-अरथा' शब्द का प्रयोग प्रसंग को दृष्टि में रखकर ही किया गया प्रतीत होता है नहीं तो 'श्रेयो' का उचित पर्याय 'भला', 'कल्याण' आदि ही होना चाहिये ।

योगस्थः, का भावानुवाद 'योग सहारे चलदा' 'सङ्. ग' का समता पथ 'एवं सिद्धयसिद्धयोः समोभूत्वा' का 'बिगड़ी बनी बराबर समझी' शब्दों का प्रयोग मूलार्थ को खोलकर स्पष्ट करने के प्रयत्न में अनावश्यक शब्दों का आगमन हो गया है । इसी प्रकार से इनके समूचे अनुवाद को देखकर इनकी सुलझी हुई अनुवाद-कला को जाना जा सकता है ।

शिना व्याकरण के रचयिता

डोगरी, हिन्दी, पंजाबी, एवं फ़ारसी में कविता करने के साथ-साथ कवि सम्याल ने अपने गिलगित्त वास में गिलगित्ती भाषा (शिना) में एक लघु व्याकरण की रचना भी की है । अमुक व्याकरण फ़ारसी लिपि में है जिसमे चार अध्यायों के अन्तर्गत 'शिना' भाषा के वागंगो— संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया रूप एवं वाक्यपदों की शब्दावली का एकवचन और बहुवचन रूप देकर उनके फ़ारसी एवं रोमन लिपियों में उच्चारण दिये गये हैं । व्याकरण के अध्यायों एवं उप-अध्यायों के नाम फ़ारसी-उर्दू भाषा मे दिये गये हैं । इसके अन्त में दो लघु लोक कथाओं को 'शिना' में और अन्य पाठकों की सुविधा के लिए दूसरे कालम में उर्दू में प्रस्तुत किया गया है ।

यह व्याकरण पुस्तिका कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है । इसमें दिन- प्रति दिन के व्यवहार में लाई जानेवाली शिना भाषा की लगभग सम्पूर्ण शब्दावली जैसे हवा, पानी, मात्रा, औषधि, भोजन, मसाले, दाल, फल-सब्ज़ी, वनस्पतियाँ, पशु-पक्षी ,समय, स्थान, दिन-माह, शरीरांग, क्रीड़ा-मनोरंजन आदि के बोधक शब्द एवं उनके फ़ारसी-रोमन लिपियों में उच्चारण दिये गये हैं, जिनसे गिलगित्त में नियुक्त सरकारी कर्मचारियों के लिए गिलगित्तियों से वार्तालाप करना सम्भव हो सका । जम्मू-कश्मीर के महाराजा गुलाबसिंह (ई. सन् 1822-1855 ई.) के वज़ीर जनरल जोरावरसिंह ने अपनी योग्यता एवं डोगरा सैनिकों के भुजबल से जम्मू प्रान्त की सीमाएँ उत्तर पूर्व में दूर लदाख, अस्कर्दू,तिब्बत, गिलगित्त एवं रूसी-तुर्कीस्तान से जा मिलायी थी । स्पष्ट है कि जम्मू के डोगरा लोग भी राज्य सरकार द्वारा विभिन्न कार्यालयों में नियुक्त होकर वहाँ जाया करते थे । रघुनाथ सिंह सम्याल जब गिलगित्त में नियुक्त हुए तो उन्हें आपसी मेलजोल एवं विचारों तथा भावों के आदान-प्रदान के लिए कठिनाई का सामना करना पड़ा और उसी का परिणाम यह शिना

व्याकरण है । ठा. साहब ने अपनी गिलगित्त नियुक्ति के एक वर्ष में ही शिक्षित गिलगित्तियों से 'शिना' सीख ली और व्याकरण लिख डाला । इसकी रचना-विधि का विवरण व्याकरण की भूमिका में प्रकाशित रघुनाथ सिंह के ही शब्दों में इस प्रकार है :

> "मुझे अगरचा एक साल से कम अरसा यहाँ आए हुए गुज़रा है । इस कमी को महसूस करके मैंने चंद तालीम-याफ़ता अश्खास की रहनुमाई में इस ज़बान की बा-तारीफ़ सर्फ़ व-नहुतरतीब का अमकान मजूद पाकर यह हकीर तोहफ़ा मरतब करने का हौसला किया है क्योंकि किसी जबान को सीखने के लिए इंग्लिश टीचर से किसी तरह फिकरे याद करने की निस्बत असूली वाकफ़ीयत ज़्यादा कारामद हो सकती है । मैं उन फरद वजापूतों के लिए इबतदाई काम में हमेशा सराजहो-जानी मुमकिन है । ख्वाशितगार मानी होकर उम्मीद रखता हूँ कि जुबानदानी के मशाएक असहाब मुनासिब मौक़ा पर इसको तकमल और सही शक्ल पर बदल सकेंगे और इस तरह यह इबितदाई करम एक मुफीद काम की बुनियाद साबित होगी ।"

व्याकरण के अन्तिम पन्नों (पृष्ठ 48-58 तक) मे अभ्यास के लिये दी गयी दोनों लोक-कथाएँ—केवल कथा के पात्र नामों को छोड़कर-डोगरी की लोककथाएँ हैं—जो डोगरा लोगों के वहाँ जाने और गिलगित्तयों से विचारों का आदान-प्रदान करने का संकेत कराती है । शिना व्याकरण की भूमिका में ठाकुर रघुनाथ सिंह ने रियासत की शख्सी हकूमत के द्वारा इनके व्याकरण-लेखन कार्य में किसी भी प्रकार की सहायता न देने के कारण उसके प्रति रोष प्रकट किया है और भारतीय सेना के कमांडर-इन-चीफ़ जनरल करियप्पा की भूरि-भूरि प्रशंसा की है जिन्होंने लेखक सम्याल को व्याकरण प्रकाशन प्रक्रिया में सहायता प्रदान की ।

उपसंहार

ठाकुर रघुनाथ सिंह सम्याल ज़िला जम्मू की तहसील साम्बा में सन् 1885 में एक जागीरदार परिवार में पैदा हुए । इनके पूर्वज लखनपुर से किसी ब्रह्म-शाप से पीड़ित होकर साम्बा में आकर बस गये थे । साम्बा नगर कंढी का एक प्रमुख नगर है । निर्जल, कंकरीली एवं पथरीली इस धरती ने यहाँ राष्ट्रीय हित के लिय मर-मिटनेवाले शूरवीरों को जन्म दिया है, वहाँ योद्धाओं के साथ-साथ कलाकारों, चित्रकारों, मूर्तिकारों, कवियों एवं साहित्यकारों को भी पैदा किया है । ठाकुर रघुनाथ सिंह इसी धरती के सपूत थे ।

दौड़, कबड्डी व्यायाम आदि से गठा हुआ, पर छरहरा साढ़े पाँच फुट का इनका शरीर था जिस पर डोगरा पोशाक खूब सजती थी ।

ठाकुर रघुनाथ सिंह का व्यक्तित्व विरोधाभासों का सम्मिश्रण रहा है । एक ओर वे हँसी-मज़ाक के स्वभाव वाले, मिलनसार व्यक्ति थे पर दूसरी ओर सहसा क्रोध और विरोध भी खुलकर करते थे । जागीरदारी व्यवस्था में उनका अटल विश्वास था जिसे उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से उजागर किया, पर एक ही घर में उनका अपना सपुत्र राजनैतिक क्षेत्र में आजीवन भिन्न दल का समर्थक रहा-जिसका उन्होंने कभी विरोध नहीं किया । रघुनाथ सिंह एक ओर तो परम्परागत रस्मोरिवाज़ एवं छूतछात के विरुद्ध थे पर दूसरी ओर सहशिक्षा का भी उन्होंने खूब विरोध किया । नारी स्वतन्त्रता को वे भला नहीं मानते थे ।

देश-प्रेम की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी । डोगरा देश एवं इसकी भाषा डोगरी को उन्होंने हीरे-मोतियों की खान माना है ।

"महाजनो येन गताः सः पन्थाः' की धारणा में उनकी आस्था नहीं थी ।

उन्होंने अपना व्यावसायिक जीवन एक स्कूल-अध्यापक से प्रारम्भ किया । तदुपरान्त माल-विभाग में एक कर्लक बन गये और वहीं से उन्नति करते-करते तहसीलदार के पद पर पहुँचे जहाँ वे 34 बरस की सेवावृत्ति के उपरान्त सेवानिवृत्त हुए । वे अपनी तहसीलदारी के जीवन में न्याय प्रिय एवं सत्य-झूठ की परख करने के लिये प्रसिद्ध थे ।

वे एक प्रतिष्ठित समाज-सुधारक भी थे । समाज में लोगों के पारस्परिक झगड़े इस प्रकार सुलझा देते थे कि दोनों ही पक्ष प्रसन्नता पूर्वक विरोध मिटाकर एक हो जाते थे । वे स्पष्टवक्ता थे । लोगों की भलाई के लिये उन्हें बुरा-भला भी कह लेते थे—पर सदा उनके हित की कहते थे । इसलिये उन्हें लोगों से बहुत मान-सम्मान मिला ।

उनका राजनीतिक जीवन प्रजा-परिषद के आन्दोलनों से शुरू हुआ और अपनी इसी विचारधारा को लोगों तक पहुँचाने के लिये कविता को उन्होंने माध्यम रूप में अपनाया । उन्होनें अधिकतर डोगरी में और कतिपय पंजाबी , हिन्दी , उर्दू में भी काव्य रचनाएँ कीं । सन् 1957 में रियासत जम्मू-काश्मीर की असेम्बली सीट के लिये वे चुनाव में खड़े भी हुए पर रामप्यारा सराफ से हार गये । वे दो बार जेल भी गये । एक बार दस महीने का कारावास भोगा । इसी समय इन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता का डोगरी में पद्यानुवाद किया । राज्य सरकार की ओर से कई बार इनकी पेंशन भी बंद की जाती रही पर ये अपने सिद्धांतों पर डटे रहे ।

ठाकुर रघुनाथ सिंह ने अपने जीवन के संध्याकाल में डोगरी के साहित्य-जगत में प्रवेश किया । सेवानिवृत्त होकर उन्होंने दोनों काम—कविता करना और प्रजा- परिषद् के मंच से राजनैतिक जीवन का प्रारम्भ साथ-साथ किया ।

उन्होंने औपचारिक शिक्षा भले ही आठवीं कक्षा तक ग्रहण की थी पर वस्तुतः उन्हें शास्त्रों का भी गूढ़ ज्ञान था । वे विद्याव्यसनी थे । उन्हें डोगरी-पंजाबी, उर्दू-फ़ारसी-हिन्दी आदि के लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों के सहस्रों पद और शे'र कण्ठस्थ थे । मुहावरों एवं लोकोक्तियों से भरपूर उनकी बातों, कविताओं, कहानियों के श्रोता उनके मित्रगण

एवं अन्य लोग उनकी बहुत प्रशंसा करते थे । उनकी कविता जितनी सशक्त थी, उतना ही प्रभाव-पूर्ण उनका गद्य था । उनकी कतिपय कविताएँ एवं भगवद्गीता के प्रथम दो अध्याय 'अरुणिमा' काव्य-संग्रह में प्रकाशित हैं और 'कविता रत्न' पुस्तक में रघुनाथ सिंह की चौदह कविताएँ एवं श्री मद्भगवद्गीता का सम्पूर्ण पद्य-अनुवाद संकलित है ।

रघुनाथ सिंह ने श्रीमद्भगवद्गीता का डोगरी में पद्य-अनुवाद करके एक विशेष योगदान दिया है । उनकी भाषा ठेठ डोगरी थी, जिसमें मुहावरों, लोकोक्तियों की भरमार थी । उन्होंने अपने गिलगित्त निवासकाल में वहाँ की भाषा 'शिना' में इसी नाम से एक लघु-व्याकरणक पुस्तिका रच डाली जिसमे दिन-प्रतिदिन के व्यवहार में काम आनेवाली शब्दावली फ़ारसी एवं रोमनलिपियों में दी गई है । इससे गिलगित्त में नियुक्त होकर जाने वाले राजकीय डोगरा कर्मचारियों के लिए वहाँ के मूल निवासियों के साथ वार्तालाप करना सुकर हो गया । व्याकरण के अन्तिम पन्नों में लिखी गई दो लघुकथाएँ केवल कथा के पात्र नामों को छोड़कर डोगरी की ही लोक-कथाएँ हैं और जो डोगरा लोगों और गिलगित्त वासियो के पारस्परिक वार्तालाप का संकेत करती है ।

ठाकुर रघुनाथ सिंह ने डोगरा राजाओं का इतिहास भी लिखा है जिसकी पाण्डुलिपियाँ उनके पौत्र डी. एफ. ओ., ठा. मनुराय सिंह के पास सुरक्षित है । कारावास के जीवन में लिखी हुई बीसियों लघु कहानियाँ, लघु लेख एवं कविताएँ भी उनके पुत्र गोबिन्द सिंह और पौत्र के पास पड़ी है । ठाकुर रघुनाथ सिंह जीवन के अन्तिम समय में कैंसर के रोग से ग्रस्त हो गये और अठहत्तर वर्ष की आयु भोगकर दिसम्बर 1963 में संसार से चल बसे ।

प्रस्तुत है शिना-व्याकरण के मुख प्रष्ट का विवरण

शिना व्याकरण का मुखपृष्ठ

शिना

यानि

गर्वनमैण्ट जम्मू व काश्मीर के सरहदी ज़िला

गिलगित्त की ज़बान

मुरतबा

ठा. रघुनाथसिंह साहिब सम्याल

तहसीलदार लैंडरिकार्ड्स गिलगित्त

दर संवत् 1988 विक्रमी

यह पब्लिक प्रिंटिंग प्रैस जम्मू में ज़ेर-एताम लाला
मुल्कराजसराफ, बी.ए. प्रिंटर पब्लिशर ने तवा किया ।

चयन

मूल डोगरी

राम भजो ते जन्म सुधारो सिमरो कृष्ण मुरारी ।
इक सदा कर बान- शरासन इक सुदर्शन धारी ।।

कोट ज्वाला, उमा चनैनीं, त्रिकुटा आदक्वारी ।
शुद्ध पवित्र देस हिमाचल मनमहेश त्रिपुरारी ।।

रिद्धि-सिद्धि दे दाता शंकर, सदा भरी दी झोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

छां ठण्डी, फल खट्टे-मिट्ठे, रसले, छैल तसीर ।
ठण्डे-मिट्ठे, हलके, पाचम, बगदे नदियें नीर ।।

राग-रंग ते साज-सजीले, ढोल बजान्दे ढोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

जम्मू ,चम्बा, शिमला, मण्डी, कुल्लु, कोट, कसोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

जिन्न बनाए शेर डोगरे, जिन्न बनाए बीर ।
जिन्न मारियां तेगां भालें, जिन्न चलाए तीर ।।

जिन्न लंघाइयां डूग्घियां, नदियां जिन्न टपाए पीर ।
जिन्न बजाए ल्हौर दमामें जिन्न लेया कश्मीर ।।

ओ डुग्गर दी रानी भाषा, नेई कुसै दी गोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

गुलाब सिंघै गी जिस नै दित्ते तेग, तेज तदबीर ।
दुनिया दे बिच बड़े बन्हाए, जिन्न घड़े रणबीर ।।

जिसदी खातर लड़े सूरमें गुग्गा, काली-बीर,
बाजसिंह जरनैल, हुश्यारा, जोराबर बजीर ।
प्रेमपाल, राजिन्द्र ऐसे सूर-बीर रणधीर,
पिच्छैं पैर निं रक्खे, भाएं अग्गैं गै शरीर ।।

हिन्दी अनुवाद

भजो राम और जन्म सुधारो सिमरण करो गिरिधारी ।
एक सदा कर बाण-शरासन एक सुदर्शन-धारी ।।

कोट-ज्वाला, उमा चनैनी, त्रिकूटा में आदिकुमारी ।
शुद्ध पवित्र देश हिमाचल, मनमहेश त्रिपुरारी ।।

रिद्धि-सिद्धि के दाता शंकर, सदा भरी हुई झोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

ठण्डी छाँव फल खट्टे-मीठे, रसीले उत्तम तासीर ।
ठन्डे-मीठे हलके पाचक, बहें नदियों मे नीर ।।

राग-रंग और साज सजीले, ढोल बजावें ढोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

जम्मू-चम्बा, शिमला, मण्डी कुल्लू-कोट-कसोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

जिसने बनाए शेर डोगरे जिसने बनाए 'बीर' ।
जिसने चलाए भाले-बरछी, जिसने चलाए तीर ।।

जिसने गहरी नदियां फांदी, पार कराए पीर ।
जिसने बजाए लाहौर नगाड़े, जिसने लिया कश्मीर ।।

वह डुग्गर की रानी भाषा, नहीं किसी की गोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

जिसने दिए गुलाबसिंह, को भाल-तेज तदबीर ।
जिसने बड़ों -बड़ों को पछाड़ा, विश्व-नामी रणबीर ।।

जिसके लिए लड़े शूरवीर, गुग्गा काली बीर ।
बाजसिंह जरनैल हुश्यारा, जोराबर बज़ीर ।।
प्रेमपाल, राजिन्द्र ऐसे शूरवीर रणधीर ।
पीछे पाँव न रखा, चाहे आगे गए शरीर ।।

हीरे-पन्नें कान भरी दी, कड्ढो सब फरोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

ऊंच, नीच, राजपूत, ब्राह्मण, राजा, रंक, फकीर ।
सब प्यारे पुत्तर जिसदे, नाई, दुसाली, झीर ।।

छूतछात दा नां नेई जित्थें, बन्नां, बाड़ लकीर ।
जिसदी गोदी सारे खेढन, पीन थनें दा शीर ।।

हिन्दू मुस्लम, सिख, ईसाई, गद्दी गुज्जर, कोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

बोली बड़ा खजान्ना भाइयो, लाल रत्न दी खान ।
कौमें दा बल पौरुष बोली, जिन्दू दै बिच जान ।।

बोली दै बिच मान बड़ाई, बोली दै बिच शान ।
बोली गेई ते मिटेआ भलेआं, स्हाड़ा नाम नशान ।।

घारो, बेला, सगन बचारो अजैं निं चुक्का डोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

जिस रस्ते पर चलै गुआण्ढी, तुस बी चलो भराओ ।
कल्ल गल्ल फिर हत्थ निंऔनी, जेकर अज्ज गुआओ ।।

साधें दे बिच चोर बड़े दे, इन्दा दाऽ नेई खाओ ।
केहु हासल जे वक्त गुआई, पिच्छूं दा पछताओ ।।

भाव, भेस ते भाशा अपनी पैहलें इक बनाओ ।
बधो, फलो ते बस्सो-रस्सो चंगी रीत चलाओ ।।

कौड़ा अम्रत भाएं पीयो, मिट्ठा जैहर निं खाओ ।
ख'लका टाहुला पकड़ो भाइओ, उप्पर हत्थ निं पाओ ।।

माहुनु ओहु , जो बल्लैं चलदे, शाली मारन घोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

हीरे-पन्नों से भरी हैं कानें, ले लो सब टटोली[1]।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

ऊँच, नीच, रजपूत, ब्राहुमण, राजा, रंक, फकीर ।
सब है प्रेम-दुलारे जिसके, नाई, दुसाली झीर[2]।।

छुआछात का नाम नहीं जहाँ, हद्द दीवार न लकीर[3] ।
जिसकी गोद में खेलें सारे, पीएँ स्तनों का क्षीर ।।

हिन्दू, मुस्लम, सिख, ईसाई, गद्दी, गुज्जर, कोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

बोली बड़ा खजाना भाइयो, लाल रत्न की खान ।
कौमों का बल पौरुष बोली, देह मध्य ज्यों प्राण ।।

बोली में ही मान बड़ाई, बोली ही में शान ।
बोली गई तो मिट जावे, हम सबका नाम-निशान ।।

रुको कहारो, समय विचारो, न अभी उठाओ डोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

जिस पथ चले पड़ोसी जाओ, तुम भी राह उसी पर ।
कल फिर बात न हाथ में आवे, अगर गँवा दी आज ।।

चोर घुसे हैं अन्दर तेरे, धोखा इनसे मत खाओ ।
समय बीत जाये तो फिर, तुम पीछे मत पछताओ ।।

भाव, वेष और भाषा अपनी, पहले एक बनाओ ।
फलो-फूलो, आबाद रहो और भली ही रीति चलाओ ।।

कड़वा अमृत चाहे पी लो, मीठा ज़हर मत खाओ ।
नीचे वाली शाख को पकड़ो, ऊपर हाथ न डालो ।।

मानव चलते सदा धैर्य से, भरें छलांगे घोली[4] ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी इस डुग्गर की बोली ।।

---

1. टटोल कर 2. धीवर 3. रेखा 4. बन्दर

व्याकरण, इतिहास बनाया, गीता लिखी अमोली;
गान गीत सब लान चटाके, भली डोगरी बोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

हिन्दी, सिन्धी होर मराठी, मराठी, उड़िया बंग ।
पंजाबी, गुजराती, उड़दू, इंग्लिश इसदै अंग ।।

हिन्दी दी गै भैण डोगरी, खरा निं पाना भंग ।
पहला बिस गेआ निं भल्यां, होर निं मारो डंग ।।

आंधरा बालें दन्द त्रोडे, सिख छोड़ड.न ठोली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

बोली दे बिच खण्ड डोगरी, लड्डूं हीर-मखाने ।
गद्दी, गुज्जर, गौड़ बौरिये, सांसी, सिख-लबानें ।।

जिस मिट्ठे गी खन्दे सारे, बुड्ढे, गभरू अयाने ।
उसदा सानी होर बनाइयै, पानी फोट तड.ाने ।।

मन्नो जां नेईं मन्नो भ्राओ, गल्ल सुनानां खोल्ली ।
मिट्ठी-मिट्ठी मती प्यारी, इस डुग्गर दी बोली ।।

व्याकरण और इतिहास बनाया, लिखी गीता अनमोली ।
गावें गीत आनन्दित होवें, भली डोगरी बोली ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

हिन्दी, सिन्धी और मराठी, मराठी, उड़िया, बंग ।
पंजाबी, गुजराती, उर्दू, इंगलिश इसके अंग ।।

हिन्दी की ही बहन डोगरी, जचे न पाना भंग ।
पहला विष भी गया नहीं जब, और न मारे डंक ।।

आंध्रवासी दाँत तोड़ेगें पंजाबी देगें ठोली[1] ।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

बोलियों में है मधुर डोगरी, लड्डू खांड-मखाने ।
गद्दी, गुज्जर, गौड़ बौरिये सासी, सिख-लबानें ।।

जिस मीठे को खावें सारे, बाल, जवान और बूढ़े ।
उसका और बनाकर सानी हम, फूट कभी न डालें ।।

मानो या न मानो भाइयो, बात कहूं मैं खोली।
मीठी-मीठी बड़ी प्यारी, इस डुग्गर की बोली ।।

1. उखाड़

त्रै दी मैह्मा

त्रैवे चीजां -सुच्चियां, दुद्ध, मखीर ते, गन्नां
त्रै नेई जफ्फा छोड़दे, रिच्छ, शराबी, अ'न्ना ।
त्रै नेई सांझे रखने दातन, कधा, रन्नां
शराबी, चोर, जुआरिये, नंगा करदे चन्ना ।
त्रै घटन तां दुनिया बसदी, ठग्गी, रिशवत, स'न्नां ।
त्रैवे अ'ग्ग बगाड़दे राल, मुंढ ते आ'न्ना ।
रजपूत, रन्न ते खच्चरां, अड़ी छोड़न तां मन्नां ।
लस्सी ढोडे मक्खन छोड़ी, चाहु ते बिस्कुट खन्नां
होने जीने दा राहु नेई लभदा, की कुरस्तै जन्ना ?
गल्लें आले दिखदे रेही गे, निश्चे तरेआ धन्नां
घोड़े दी नेई लत्त झलोंदी, ऊँट नेई लंघदे सन्नां ।
इक बेरी जे जफ्फा चाढ़ै, कदें नेई छोड़ै अ'न्ना
ताऊ लेई दे ठानेदारी, माऊ दे गोडे भन्नां ।

तीन की महिमा

तीनों चीज़े उत्तम-पावन, दूध, शहद और गन्ना
तीन न छोड़े पकड़ को, रीछ, शराबी 'अन्ना'[1]
तीनों साथ न राखिये, दातुन, कंघा और रन्ना[2]
शराबी चोर- जुआरिये नग्न करे, मेरे 'चन्ना'[3]
तीन घटें दुनिया बसे, ठग्गी, रिश्वत, 'स'न्ना'[4]
तीनों भविष्य बिगाड़ते, झगड़ा, मूल और 'अ'न्ना'
राजपूत, महिला और खच्चर, ज़िद छोड़ें ता[5]मन्ना[6]
लस्सी 'ढोडा'[7] मक्खन छोड़ के, चाय और बिस्कुट 'खन्ना'[8]
नज़र न आवे डगर जब, फिर क्यों कुमार्ग 'जन्ना'?[9]
डूब गये बतियाने वाले, निश्चय ही तर गया धन्नां
बुरी दुलती घोड़े की, ऊंट न निकले स'न्नां
एक बार यदि जकड़ में ले ले, कभी न छोड़े अ'न्ना
ताऊ ले दे थानेदारी, मां के घुटने 'भन्ना'[10]

---

1. अन्धा 2. पत्तियों 3. चाँद 4. सेंध 5. तो 6. मानूँ 7. मक्की की रोटी 8. खाते हों 9. जाते हो 10. तोड़ दूँ

कृष्ण-लीला

विनाश काले विपरीत बुद्धि, गल्ल स्याने गाई ।
होनी बरती कैसे उप्पर, दिक्खो शामत आई ।।
बन्दी खान्ने पिता बी कन्ने पाए भैन-भनोई ।
बसुदेव ते देवकी तरस, निं कीता कोई ।।
बन्दी खान्ने दे बिच गै, होआ कृष्ण-अवतार,
सुत्ते पैहुरे कैंस दे, लीला होई अपार ।।
झड़- झड पेइयां बेड़ियां, खुल्ले दुर्ग-द्वार ।
बन्दी होए मोकले, बोलन जै-जैकार ।।
सिंह बने बिच गरजदे, बद्दल मोहुलै-धार ।
जमना ठाठां मारदी, न्हेरा अन्ध-गवार ।।
कोई खबर नई कैंस गी, पुज्जे नंद द्वार ।
अद्भुत खेढां खेढियां, कीते चर्ज अपार ।।
पैहुलै मारी पूतना, जालम चन्नू चमार ।
पिच्छों कैंस पछाड़ेआ, सबनें दा सरदार ।।
असुर संहारे सैकड़े, पापी केई हजार ।
दुरजोधन दा तरोड़ेआ, आकड़, मद, हंकार ।।

कृष्ण-लीला

विनाश काले विपरीत बुद्धि, बात पते की है भाई
होनी कैसी बीती कैसे, विपदा कैसी आई ?
कारावास में डाल दिये, बहन-पिता-बहनोई ।
वसुदेव और देवकी, दया भई न कोई ।।
बन्दीखाने बीच ही, हुआ कृष्णावतार,
सो गए सारे द्वारपाल, लीला हुई अपार ।।
छिन्न-भिन्न हुई साँकलें, खुल गये दुर्ग-द्वार,
बन्दी भी आज़ाद हुए, बोले जय-जयकार ।।
सिंह लगे वन गरजने, बादल बरसे मूसलाधार,
पूर्णयौवना यमुना हो गई, छाया घोर अन्धकार ।।
खबर मिली न कंस को, पहुँचे नन्द-द्वार,
अद्भुत खेली लीलाएं, अचरज किये अपार ।।
पहले मारी पूतना, पापी चन्नू चमार ।
पीछे कंस पछाड़ दिया, जो सबका था सरदार ।।
असुर संहारे सैकड़ों, पापी कई हज़ार ।
दुयोधन का तोड़ दिया, मान-गुमान-अहंकार ।।

गीता-म्हातम

'नाथा' ढाइयां ढेरियां, अर्जन होआ लचार ।
ढट्ठा फिरी ठुआलेआ, रण-भूमि बशकार ।।

पाप अग्न भड़की जदूँ, जलन लगा संसार ।
बदल बरहाए ज्ञान दे, कीता ठण्डा-ठार ।।

चार वेद, छे शास्त्र, गीता सब दा सार ।
भगती, मुक्ति-दायनी, रिद्धि-सिद्धि भण्डार ।।

औखा तरना मित्तरो, भवसागर संसार ।
मन गै बेड़ी रोढ़दा, मन गै लान्दा पार ।।

मन दियां खेढां सारियां, सोचो बारम-बार ।
मन दे जित्ते जीत ऐ, मन दे हारे हार ।।

गीता-माहात्म्य

"नाथा" साहस त्याग कर, अर्जुन हुया लाचार ।
पतितों का उद्धार किया, रणभूमि मंझधार ।।

पापानल जब भड़क उठी, जलने लगा संसार ।
वर्षा हुयी ज्ञान की, शीतल भयी बयार ।।

चारों वेद और छ शास्त्र गीता सबका सार ।
भक्ति, मुक्तिदायिनी, रिद्धि-सिद्धि भण्डार ।।

दुष्कर तरना मित्रगण, भव-सागर संसार ।
मन ही नाव डूबावत है, मन ही लगावे पार ।।

मन की ही लाला सारी, सोचो बारम्बार ।
मन के जीते जीत है, मन के हारे हार ।।

डोगरा देस जगाई जायां

भाव बी भेस बी देस बी रांगड़ा,
मीरपुर, जम्मुआं, नूरपूर, कांगड़ा,
सोहे दी ब्हार, बसोए दा भांगड़ा,
दब्बिऐ ढोल बजाई जायां । डोगरा देस.....

खंड बी डोगरे, खीर बी डोगरे,
खूएं दा ठंडड़ा, नीर बी डोगरे,
आकड़ै कोई तां पीर बी डोगरे,
डंडे दी गल्ल समझाई जायां । डोगरा देस.....

मूर्ति धर्म ते कर्म दी डोगरे,
कुंगले पट्ट ते नर्म बी डोगरे,
लग्गै लडाई तां गर्म बी डोगरे,
आई दी ब्हार भखाई जायां । डोगरा देस.....

पाले दी ब्हार, बसाहू निं कोई बी,
औखियां धाटियां राहू निं कोई बी,
डूंघे दरेया दी थाहू निं कोई बी,
बेड़ी, बंझ, मलाहू निं कोई बी,
दिक्खियै नेई घबराई जायां । डोगरा देस.....

डरै निं कोई घबराऽ निं कोई बी,
हौसला अपना ढाऽ निं कोई बी,
सामनै आए दा जा निं कोई बी,
तक्कियै तीर चलाई जायां । डोगरा देस.....

डोगरा देश जगाते जाना

भाव भी भेस भी देश भी रांगड़ा[1]
हमीरपुर-जम्मू, नूरपुर कांगड़ा
गर्मी का मौसम, बैसाखी का भागँडा
डटकर ढोल बजाते जाना । डोगरा देश जगाते जाना ।।

खाँड भी डोगरे, क्षीर भी डोगरे,
कुओं का शीतल नीर भी डोगरे,
आँख दिखाए कोई, तो पीर भी डोगरे
डण्डे की बात समझाते जाना । डोगरा देश.....

मूर्ति धर्म और कर्म की डोगरे
रेशम जैसे है नर्म भी डोगरे,
युद्ध छिड़े तो गर्म भी डोगरे
आई बहार गर्माते जाना । डोगरा देश.....

शीत काल की बात न कोई
दुर्गम घाटियाँ पथ न कोई
गहरे नद-नदियाँ तल न कोई
नाव, चप्पू और नाविक न कोई
देखकर मत बौखलाते जाना । डोगरा देश.....

डरे न कोई घबराये न कोई
धैर्य अपना गँवाये न कोई भी
सामने आया हुआ जाये न कोई
जाँच कर तीर चलाते जाना । डोगरा देश.....

---

1. रंगीन

माली

सूरज, तारे, चन्न चमकदे, चढें नियम-अनुसार,
निक्के, भौंदे रौहुन चफैरै, बड़े खड़े बछकार ।
मुड़-मुड़ आमन रुत्तड़ियाँ दिन, लगन, महुरत, बार,
बात्ता चलै न पाता सरकै बिनां हुकम सरकार ।
बिन घम्यारें घड़े नि बनदे, कड़े बिना सन्यार,
बाज दरजियें सूट नि बनदे, बूट बिना चम्यार ।
बाज लोहारें सन्दर "नाथा" मन्दर बिना चनार,
बिन माली जग-बाग नि बनेया, फल डाली गुलजार ।

मैहमां

कौन समुन्दर मोती सुटदा, कान्नें दै बिच हीरे जी ?
बन-बन फिरदें सिंह गरजदे, रण-रण सूरे बीरे जी ।
नीति-धर्म, उपदेश सनान्दा, धारै मुनख-सरीरे जी,
चानक, शैंकर, नानक, बन्दा, तुलसी, सूर, कबीरे जी ।
उच्चे पर्वत कौन बनांदा, डूंघे नीर गम्भीरे जी?
रंक बनाए राजे कुस ने, राजे रंक-फकीरे जी ?
उच्ची गुड्डी कौन चढ़ान्दा, चढ़ै तां पेचा कौन लड़ान्दा ?
तौला-तौला ढेल बधान्दा, खिचदा धीरे-धीरे जी।

माली

सूरज चंद्र और तारे चमकें, चढ़े नियमानुसार,
छोटे भ्रमण करें चहुं ओर को, बड़े खड़े मंझदार ।
प्रत्यावर्तन हो ऋतुयों का, फिर दिन-लग्न-मुहूर्त आवें
पवन चले नहिं पत्ते हिलते, बिन आज्ञा सरकार ।
बिन कुम्हार न घड़े ही बनते, कङ्गन बिना सुनार,
बिन दर्जी के सूट सिलें नहि, बूट बनें न बिन चमार ।
न बिन लुहार औज़ार "नाथजी" मन्दर बिन कारीगर,
बिन माली जग बाग बने न ही फल-डाली-गुलज़ार ।

महमां

कौन सागर में डाले मोती, कानों के मध्य हीरे जी ?
वन-वन फिरते सिंह गर्जते, रणभूमि में शूरवीरे[1] जी !
नीति-धर्म, उपदेश सुनाता, कौन मनुष्य शरीरे जी ?
चाणक्य, शंकर, नानक, बंदा बैरागी, तुलसी, सूर-कबीरे जी ।
उँचे पर्वत कौन बनावे, गहरे नीर गम्भीरे जी ?
किसने रंक बनाये राजे, राजे रंक-फकीरे जी ?
ऊंचे कौन पतंग चढ़ावे, और फिर पेचा कौन लड़ावे ?
सहसा कौन डोर को छोड़े, खींचें धीरे-धीरे जी ?

---

1. कविता में बहुवचन के लिए 'ए' प्रत्यय का योग होने से बीरे, कबीरे आदि रूपों का प्रयोग किया गया है ।

छाह् बत्हेरी छोली

ऊऐ डण्डा, दुमची-झुण्डा, ऊऐ पैहुला थां ।
ऊऐ गल्लां, ऊऐ हल्लां, डोरे खुण्ड- ग्लां ।।

कुसै ने बोरी चौल पाए दे, कुसै नै थैले मांह् ।
चोरें लुट्टी लेआ खलाड़ा, कुतै निं स्हाड़ा नां ।।

दुक्ख दिलै बिच रखचै कियां, दसचै कुसी फरोली ?
नेरें दे बिच शेर बड़े फिर ब्रांह्मण बड़े भटोली[1] ।।

ऊऐ आप-धड़फफी सारै, ऊऐ खोहा-खोही ।
चोर खजानें पुटदे न्हेरै, हाकम लुटदे लोई ।।

हाहाकार मची दी सारै, कुसी सुनाचै रोई ?
हाकम नमें ते चुगल पुराने, अर्ज निं सुनदा कोई ।।

दुक्ख दिला बिच रखचै कियां, दसचै कुसी फरोली ?
मक्खन उप्पर पा निं आया छाह् बत्हेरी छोली ।।

बुरा[2]

बुरा नित्त का पिंदडा, बुरा जंगल दा बासा,
बुरी कलैहूनी घरै बिच, बुरा गंवारें हासा ।

बुरा दुद्धै बिच लून रलाना, दाली खंड पतासा,
मंगते दिक्खी अक्ख रलाना, कक्ख ठोकना नासा ।

बुरा बब्ब जो कर्जा चाढे, पुत्र खेढै पासा,
दुद्ध मलाइयां खंडा खाई, रंडा करन दनासा ।

नार बुरी जो घर-घर फिरदी, शर्म नेई करदी मासा,
यार बुरे जो औखै बेल्ले, लंघन देई-देई पासा ।

भोजन के लाले पड़े अब, धन की कैसी आसा,
सिक्खी ले तू सबक बत्हेरे, दिक्खी लेआ तमासा ।

1. ब्राह्मणों की एक बस्ती का नाम ।
2. (रचनाकाल : 17 असूज 2009 विक्रमी)

बहुत ही छाछ मथी है

डंडा भी वही, झुंडा भी वही और स्थान भी है पहला ही,
बातें भी वहीं, हलें भी वहीं रस्से, डोरे, खूंटे भी वहीं ।

किसी ने लाये चावल बोरी, किसी ने उड़द का झोला,
चोरों ने लूटा खलिहान को, पर कहीं न नाम हमारा ।

दिल में दुःख छिपाएं कैसे ? किसे बताएं खोल के मन को ?
फिर मांदों में शेर घुसे है, ब्राहमण बैठे गाँव भटोली[1]

अपनी-अपनी पड़ी सभी को, वैसी ही है छीना-झपटी,
चोर लगावें सेंध तिमिर में, शासक लूटें उजियाले में ।

हाहाकार मची चहुं ओर है, किसे सुनाएँ हम रो-धोकर,
शासक नये पर चुगल पुराने, अनुनय सुने न कोई ।

दिल में दुःख छुपाएं कैसे ? किसे बताएं खोल के मन को ?
माखन तो भर-पाव न आया, बहुत ही छाछ मथी है हमने ।

बुरा

बुरा नित्य का झगड़ा, बुरा जंगल का वास,
बुरी कलहप्रिया सदन में, बुरा गँवार का हासा ।।

बुरा दूध में नमक मिलाना, दाल मे खांड-पतासा
भिक्षु से बुरा आँख मिलाना, तिनका डालना नासा ।

बाप बुरा जो ऋण चढ़ावे, पुत्र जो खेले पासा,
दूध-मलाई खांड खावे और विधवा करे दनासा[2]

नारी बुरी अति भ्रामकी, लाज करे न मासा,
मित्र बुरा जो बिपद में निकले, मित्र से करके पासा[3] ।

भोजन के लाले पड़े अब, धन की कैसी आशा,
सीख ली तूने सीख बहुत, और देख भी लिया तमाशा ।

1. ब्राह्मणो की एक बस्ती का नाम 2. रंगदार दातुन 3. पार्श्व

छे सत्त रस्तै चलदे, उप्पर बोलै कां
इक दूए गी पुच्छन लगे, किसदा लैंदा नां?
ब्रैह्मण आक्खै आखदा "र, अ, ते म ।
"मौला" आक्खै मौलवी त्रिया करै न्यां ।

जिमीदार : राहू मक्कां, बाजरा, कुल्थ मोठ ते मांहू
राई : लग्गन पालक, मूलियां रकम बटोंदी तां ।
हकीम : इसबगोल खलाओ तुस, हरै बट्ट ते आं ।
सरबानू : खुर्क मारदी ऊंट नूं बकरियां नूं चां ।
भक्त : रोम-रोम में राम रेहा खाली कोई नां थां
पहलवान : डंड कड्डी ते बैठकां ध्यो खण्ड बी खां ।
गज्जां बांगू शेर दे ते मालश रोज करां ।
जेकर तुस मेरी गल्ल नेई मन्नदे, याद कराना मां,
हत्थ जोड़े ते नक्क रगड़ेआ, सभने आक्खेआ हां
शायर : उस्सै दी अज्ज गल्ल मनोंदी जेहूदी तगड़ी बाँह

कौवे की बोली का अर्थ हर व्यक्ति ने किस प्रकार अपनी-अपनी रुचि के अनुसार लगा लिया है, इसको लिपिबद्ध करते हुए रघुनाथ सिंह सम्याल कहते है कि मार्ग पर चलते छः सात मुसाफ़िरों ने जब कौए को बोलते सुना तो एक दूसरे से पूछने लगे कि कौआ किसका नाम ले रहा है ? ब्राह्मण कहने लगा-कह रहा है 'र', अ और म । मौलवी साहब फ़रमाने लगे यह 'मौला' कह रहा है । तीसरा व्यक्ति न्याय करने लगा ।

ज़मीनदार : मक्की, जौ, कुल्थ और माष उगाओ ।
सब्जी उगानेवाला : पालक, मूली उगे तो अच्छा
खासा धन मिल सकता है ।
हकीम : ईसबगोल खिलाओ । यह पेचिश को दूर करता है ।
ऊंटचालक : ऊँट को खुजली और बकरियों को चां (एक तरह की खुजली) कष्ट देती है ।
भक्त : रोम-रोम में राम रहे खाली कोई न स्थान
पहलवान : दण्ड बैठक कसरत करूँ
घी-शक्कर भी खाऊँ
सिंह की भाँति गर्जन करूँ
नित्य तेल मलवाऊँ
यदि न माने बात मेरी
तो याद कराऊँ माँ
हाथ जोड़ और नाक रगड़ कर
सब ने कह दिया 'हाँ'
कवि : उसी की बात को माने सब
जग सशक्त हो जिसकी बाँह ।

पंजाबी-कविता

बाज दी ज़िन्दगी बाज दी ऐ,
मुल्ल कुज बी इल्ल ते का[1] दा नेईं ।
गधा फिरे हुआंकदा झुल्ल सज्जे,
फिर बी करे मुकाबिला गा[2] दा नेईं ।
शेर शेर हुन्दा सुत्ता रहे भावें,
कुत्ता लक्ख भौंके किसे थां दा नेई,
रघुनाथ सिंह बाज करतूत, झगड़े,
वीर्य बाप दा ते रक्त मां दा नेई ।

पुच्छेआ किसे ने जद परवानेआं नूं,
हाल क्यों ऐसा दर्दनाक होएआ ।
आशक फिरन दिवानेआं बांग सारे,
सीना सबर करार दा चाक होएआ,
सब्बो रेह सवाल-जवाब करदे
किस्सा आशकां दा नेई पाक होएआ ।
इक बोलेआ नां कोई बैहस कीती,
शाल मार के शमा ते खाक होएआ ।

अकल दे बाज न खूह खाल्ली,
भावें शकल सोहनी बांहुवें जोर होवे
यारां बाज बहार बेकार भावें, कोयल
कूकदी बोलदा मोर होवे ।
ताड़ी लग्ग नेई सकदी साधुआं दी,
जित्थे मचे धमच्चड़ा शोर होवे ।
ओत्थे दाद-फरियाद नूं सुने केहड़ा
कुर्सी जज्ज वाली उत्ते चोर होवे ।

हिन्दी अनुवाद

होती बाज़ की ज़िन्दगी बाज़ की है,
मूल्य कुछ भी चील और का[1] का नहीं
गधा चींकता फिरे भले काठी साजे
तो भी करे मुकाबिला गों[2] का नहीं
शेर- शेर ही है चाहे सोया रहे
कुत्ता लाख भौंके किसी स्थान का नहीं,
रघुनाथ सिंह निर्गुणी करें झगड़े
वीर्य बाप का और रक्त मां का नहीं ।

पूछा किसी ने जब परवानों से यह,
हाल ऐसा बनाया- दर्दनाक क्यों है ।
आशिक फिरे दीवानों की भाँत सारे,
सीना सबर करार का चाक हुआ ।
सभी रहे सवाल जबाव करते,
किस्सा आशिकों का नहीं पाक हुआ ।
एक बोला नहीं, न ही तर्क किया,
वह तो लपक कर शमा पर ख़ाक हुआ ।

बुद्धि बिना रहे सदा कुएं खाली,
चाहे सुन्दर हो चेहरा बाहुबल भी हो।
मनमीत बिना हो बसन्त सूना, कोयल,
गाए और बोलें मयूर चाहे ।
ध्यान लगे न कभी भी साधुओं का,
जहाँ हर समय मचता शोर रहे ।
वहाँ दादफ़रियाद को कौन सुने,
कुर्सी जज्ज की पर, जहाँ चोर रहे ।

1. कौआ 2. गाय

पंजाबी-कविता

बाज दी ज़िन्दगी बाज दी ऐ,
मुल्ल कुज बी इल्ल ते का[1] दा नेईं ।
गधा फिरे हुआंकदा झुल्ल सज्जे,
फिर बी करे मुकाबिला गा[2] दा नेईं ।
शेर शेर हुन्दा सुत्ता रहे भावें,
कुत्ता लक्ख भौंके किसे थां दा नेई,
रघुनाथ सिंह बाज करतूत, झगड़े,
वीर्य बाप दा ते रक्त मां दा नेई ।

पुच्छेआ किसे ने जद परवानेआं नूं,
हाल क्यों ऐसा दर्दनाक होएआ ।
आशक फिरन दिवानेआं बांग सारे,
सीना सबर करार दा चाक होएआ,
सब्बो रेह सवाल-जवाब करदे
किस्सा आशकां दा नेई पाक होएआ ।
इक बोलेआ नां कोई बैहस कीती,
शाल मार के शमा ते खाक होएआ ।

अकल दे बाज न खूह खाल्ली,
भावें शकल सोहनी बांहुवें जोर होवे
यारां बाज बहार बेकार भावें, कोयल
कूकदी बोलदा मोर होवे ।
ताड़ी लग्ग नेई सकदी साधुआं दी,
जित्थे मचे धमच्चड़ा शोर होवे ।
ओत्थे दाद-फरियाद नूं सुने केहड़ा
कुर्सी जज्ज वाली उत्ते चोर होवे ।

हिन्दी अनुवाद

होती बाज़ की ज़िन्दगी बाज़ की है,
मूल्य कुछ भी चील और का[1] का नहीं
गधा चींकता फिरे भले काठी साजे
तो भी करे मुकाबिला गों[2] का नहीं
शेर- शेर ही है चाहे सोया रहे
कुत्ता लाख भौंके किसी स्थान का नहीं,
रघुनाथ सिंह निर्गुणी करे झगड़े
वीर्य बाप का और रक्त मां का नहीं ।

पूछा किसी ने जब परवानों से यह,
हाल ऐसा बनाया- दर्दनाक क्यों है ।
आशिक फिरे दीवानों की भाँत सारे,
सीना सबर करार का चाक हुआ ।
सभी रहे सवाल जबाव करते,
किस्सा आशिकों का नहीं पाक हुआ ।
एक बोला नहीं, न ही तर्क किया,
वह तो लपक कर शमा पर ख़ाक हुआ ।

बुद्धि बिना रहे सदा कुएं खाली,
चाहे सुन्दर हो चेहरा बाहुबल भी हो।
मनमीत बिना हो बसन्त सूना, कोयल,
गाए और बोलें मयूर चाहे ।
ध्यान लगे न कभी भी साधुओं का,
जहाँ हर समय मचता शोर रहे ।
वहाँ दादफरियाद को कौन सुने,
कुर्सी जज्ज की पर, जहाँ चोर रहे ।

1. कौआ 2. गाय

बरदियां कोल कलंदर, बूजो पहन के नौकरी जांवदा ई ।
सिर ते हैट ते लक्क नूं बन्न पेटी, पैर ताल दे नाल टकांवदा ई ।
मुंढे रक्ख बंदूक परेड करदा, झट्ट लैफ्ट ते राइट ओ जांवदा ई,
विच्चों डरे ते घुरकियां दे बाहरों, रोब रक्ख के बुरकियां खांवदा ई
बूजो सूरमा नेई रघुनाथ सिंहा, रस्सी खिच्च उस्ताद नचांवदा ई ।

जिदी जिंद ते बिंद ना पच्छ लग्गा, ओन्नूं खबर की तेगेआं-तोड़ेआ दी ।
मोये खोतियां दे हार भार थल्ले, उन्हां सार की राखेआं घोड़ेआं दी ।
सुच्चे रैहुण कुर्बानियां देन वाले, मंदी खो नखट्टुआं कोढ़ेआं दी ।
'रघुनाथ' जी खान दा वक्त आवै, गल्ल छेड़ दिंदे मतेआं थोड़ेआं दी ।

पहन कोल-कलंदरी वर्दियों को, मियां बन्दर जी नौकरी जा रहे ।
सिर पर हैट और कमर पर बाँध पेटी, पाँव ताल के साथ रखे जा रहे ।
रख कंधे बंदूक परेड करें, झट्ट लैफ्ट और राइट को जा रहे ।
भयभीत भया बन्दर अन्दर से तो, चाहे बाहर से रोब से खाता रहे ।
बन्दर वीर नहीं रघुनाथ सिंह जी, रस्सी खींच उस्ताद नचाता रहे ।

जिनकी देह पर लगा न घात कोई जानें दर्द क्या तेगों हथौड़ों की वे ।
मरें गधों का भार जो ढोते ढोते, कीमत जानें ही क्या खरे घोड़ों की वे ।
सुच्चे रहे त्याग को करने वाले, बुरी आदत निखट्टुओं कोढ़ियों की
रघुनाथ सिंह जी जब वे खाने बैठें, बात छेड़ दें ज्यादा और थोड़े की वे ।

डोगरी-पंजाबी कविता

सीत लग्गै तां सीकां बट्टो
धुप्प लग्गै सिर हत्थें खट्टो,
भुक्ख लग्गै तां तलियां-चट्टो,
खुशियां नाल ध्याड़े कट्टो
लीडर ने फरमाया ऐ ।
एह नमां जमाना आया ऐ ।
अजे पैहला पैहर कटाया ऐ ।
गर लून दाल न आटा ऐ ,
गम बहुत अकल दा घाटा ऐ ।
की फिकर जे कुर्ता पाटा ऐ ,
की होया जे नंगा झांटा ऐ ।
एह चंगा सुख बजाया ऐ ,
एह राज जम्हूरी आया ऐ ,
अजें पैहला पैहर कटाया ऐ ।

हिन्दी अनुवाद

ठंड लगने लगे तो दाँत सटाकर अन्दर को साँस खींचो ।
धूप लगे तो हाथ से सिर को ढाँप लो ।
भूख लगने पर हथेलियां चाट लो
आनन्दपूर्ण जीवन व्यतीत कर लो ।
यही तो नेता महोदय का कथन है ।
यह नया दौर जो आया है और फिर
अभी तो स्वतन्त्रता का एक ही प्रहर बीत पाया है ।
यदि नमक, दाल एवं आटा नहीं
और दुःख अधिक बढ़ गये प्रतीत होते हैं
तो इसे बुद्धि की कमी जानो ।
क्या हुआ यदि सिर नंगा है तो ।
यह अजीब सुख मिलने लगा है !
यह नया दौर जो आया है
और फिर अभी तो स्वतन्त्रता का
एक ही प्रहर बीत पाया है ।

डोगरी-हिन्दी मिश्रित भजन

ना पण्डत ना कोई स्याना,
ना गुनियां बैरागी ।
महा-आलसी भजन-योग में,
रुचि भोग में लागी ।।

जप, तप जस नां बनेआ कोई,
ना में तीर्थ न्हाए
कथा भजन में सुने ना दिक्खे
ना रसना गुण गाए ।।

सत-मारग को भूल जगत में
उल्टे पन्थ चलाए ।
बुद्धि-हीन मैं रेआ भरम में,
खोटे कर्म कमाए ।।

गौतम नारी थल में तारी
जल में सिला तराए ।
डंक बजाए प्रभु लंक में
राजा रंक बनाए ।।

बानर, भालू , चंचल योद्धा
मूर्ख चतर बनाए,
लाज नाम की राखो रघुबर
शरण तुम्हारी आए ।।

प्रल्हाद भगत के संकट काटे
गज के फन्द छुड़ाए ।
द्रुप्त-सुता की लज्जा राखी
पल में चीर बँधाए ।।

ऊँच-नीच के रघुपति राघव
राजा राम सहाए ।
गोदी गहे पठाए राम
केवट कंठ लगाए ।।

बालमीक भये ब्रहुम-ज्ञानी
अजर, अमर खगराए ।
उल्टा नाम जपे नर पामर
भव सागर तर जाए ।।

मीठे-मीठे बेर भीलनी
चुन, चुन थाल भ्राए ।
चौल भेंट ले मिले सुदामां
रज-रज भोग लगाए ।।

दुरयोधन के छोड़ पदार्थ
साग विदुर घर खाए ।
टूटी कुटिआ, टाट पुराने
टूटी खाट बछाए ।।

श्रद्धा फूल, प्रेम के धागे
चुन-चुन हार बनाए ।
लोक-लाज कुल, जात बड़ाई,
काँटे समझ गँवाए ।।

लगन-मगन मन मीरा नाची
अपना आप भुलाए ।
कांचे छोड़ जगत के नाते
साँचे साक बनाए ।।

नारद, शारद, शिव, सनकादिक
शीश सहस्रमुख गाए ।
नेति, नेति कर वेद पुकारे
तेरा अन्त ना पाए ।।

जन्म, मरन से रहत एक रस
निर्गुण ब्रहुम कहाए ।
जब-जब होई धर्म की हानी
सगुन रूप धरि आए ।।

राम त्रेता, कृष्ण द्वापर
कलि कलगीधर आए ।
सवा लाख से एक लड़ाया
राजा, रंक भिड़ाए ।।

निराकार अपार एक रस
कठन समझ में आए ।
लाखों में कोई एक स्याना
भेद ज्ञान से पाए ।।

बाल्मीक, नारद घट योगी
यज्ञबल्क खगराए ।
भगती योग की महिमा तुलसी,
सूरदास गुण गाए ।।

ऊँच-नीच, पण्डत और मूरख
सब को पार लगाए ।
सगुण, ब्रहम, 'रघुनाथ' सिमर लै
नर पामर चित्त लाए ।।

चार युग चहुं कूट जगत में ढूंडा पता चलाया है,
दया मूल पर वृक्ष सफल कोई हमको नज़र न आया है ।
जल-थल में हम देख रहें हैं बड़े ने छोटा खाया है,
बृथा रहम है वहम जगत में कभी काम न आया है ।
वक़त वक़त के रंग-रूप हैं धूप वक़त पर छाया है,
वक़त वक़त के रंग ताल-सुर साज-बाज़ मन भाया है ।
खान-पान पहरान वक़त का पुन्न-दान और दाया है,
बेल, वृक्ष, फल-फूल वक़त के प्रभु ने नियम बनाया है ।
प्रथम राग बेवक़त अहिंसा राजा अशोक ने गाया है,
पृथ्वी राज ने दया बर्त कर तन-धन-राज गँवाया है ।
वक़त भूल कर तानसेन ने अपना आप जलाया है,
वक़त रत्न अनमोल गँवा कर कब किसने सुख पाया है ?

जहाँ पृथु के एक बाण से धरनी के दो सार हुए ।
सप्त द्वीप नौ खण्ड पृथ्वी और भवन दस चार हुए ।।
जहाँ भगीरथ गंगा लाये-जग में जय जयकार हुए ।
भरत जगत विज्ञात जहाँ पर-भारत नाम आधार हुए ।।

जहाँ राम कर बाण श्रासन-निराकार साकार हुए ।
सुर सुख-राशी असुर विनाशी-भन्जन भूमी भार हुए ।।
सिन्धु फान्द गढ़ लंक जलाये-महावीर बलकार हुए ।
जहाँ नील नल शिला तराये-शिलप कला गुणकार हुए ।।

सँख चक्र गदा पदम चतुरभुज-जहाँ कृष्ण अवतार हुए ।
घोर युद्ध के समय जहाँ पर-गीता ज्ञान विचार हुए ।।
जहाँ आचार्य शस्तरधारी योधा वृद्ध-कुमार हुए ।
जहाँ अर्जुन जहाँ भीमसेन-से बल-बुद्धी भंडार हुए ।।

देव-असुर-संग्राम जहाँ पर-युग-युग बारम्बार हुए ।
योधा थे वहाँ बोधा बनकर अहिंसा के अवतार हुए ।।
आन-बान और शान गये सब जान गई मुरदार हुए ।
रिद्धी-सिद्धी के दाता जग में- भोजन से लाचार हुए ।।

उर्दू

हस्ती मासूम की हू-बहू तसवीर है
ख्बाब से दुनिया अगर तो ख्बाब की तदबीर है

* * *

हाथ में गर हथकड़ी और पांव में ज़ंजीर है
कपड़े गाँधी का चरखा, कारगर तदबीर है
कया कहूं ऐ दोस्तो यकसोई का आलम है यह
जिस्म भारतवर्ष है तो दिल मेरा काश्मीर है ।

राख नहीं अक्सीर, कहो ये बेचारों का चारा है ।
हो जाता है जिन्दा मर कर, मरा हुआ यह पारा है ।
भड़क उठेगी नारे निहां ये इन्क़लाब की आँधी है,
ग़ैरत का इस राख के अन्दर, दबा हुआ अंगारा है ।
धर्म की खा़तिर भेंट किये थे, तन-मन प्राण दधीचि ने,
बलिदान अनमोल था वो भी, यह भी एक कुफ़ारा है ।
इन्द्र ने जिस वज्र से, वृत्रासुर को संहारा है,
अस्थि से वो बम बना था, क़िस्सा तलब इशारा है ।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

डोगरी

लेखक	पुस्तक का नाम	प्रकाशक
चरण सिंह	कविता रत्न	ललित कला, संस्कृति ते भाषा अकादमी, जम्मू ते काश्मीर, जम्मू
रघुनाथ सिंह सम्याल	श्रीमद्भगवद्गीता	
ज्ञान सिंह	नमी चेतना, अंक-74 लेख 'रघुनाथ सिंह सम्याल'	डोगरी संस्था, जम्मू
चम्पा शर्मा	डोगरी शोध 1981 (अभिनन्दन अंक)	डोगरी रिसर्च सेंटर, जम्मू युनिवर्सिटी, जम्मू

हिन्दी

तारा स्मैलपुरी	अरुणिमा	कल्चरल अकादमी, जम्मू

अंग्रेज़ी

शर्मा, नीलाम्बर देव,	एन इन्ट्रोडक्शन टु माडर्न डोगरी लिटरेचर	जम्मू एण्ड कश्मीर अकैडमी ऑफ़ आर्ट कल्चर ऐण्ड लैंग्वजिज़, जम्मू
वेदपाल दीप, मदनमोहन	एंड क्वाइट फ्लोज़ दी स्ट्रीम	डोगरी संस्था, जम्मू

अन्य स्रोत

ठा. नसीब सिंह, पैलेस रोड जम्मू, स्व. ठा. रघुनाथ सिंह के भाई
ठा. गोबिन्द सिंह, सपुत्र (स्व.) ठा. रघुनाथ सिंह
ठा. मनुराय सिंह, डी. एफ. ओ. अम्बफला, जम्मू,
पौत्र (स्व.) ठा. रघुनाथ सिंह
श्री पीताम्बरनाथ शास्त्री, कैहली मण्डी, साम्बा के निवासी